सिद्धयोग

संस्थापक : योगयोगेश्वर अनन्तश्री [illegible] महाराज

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन बवाँई- 283202 (आगरा) उ.प्र.

प्रकाशन तिथि : 01-02-2019 मूल्य - एक प्रति : 20/- , द्विवार्षिक : 360/-

वर्ष : [illegible] अंक : 11-12 जनवरी-मार्च 2019

अमृतकण

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्।।

मुण्डकोपनिषद् 2/4

यहाँ ओंकार ही धनुष है, आत्मा ही बाण है और परब्रह्म परमेश्वर ही उसका लक्ष्य कहा जाता है। वह प्रमाद रहित मनुष्य द्वारा ही बींधा जाने योग्य है। अतः उसे भेजकर बाण की तरह उस लक्ष्य में तन्मय हो जाना चाहिये।

● ● ●

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।

(गीता 16/23)

जो वेद शास्त्र विहित विधि को छोड़कर (कामना से प्रेरित होकर) मनमाना काम करते हैं, उनको न तो फल की सिद्धि होती है, न सुख मिलता है, न मोक्ष की ही प्राप्ति होती है।

● ● ●

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः।।

(गीता 8/15)

श्री भगवान के शरणापन्न होने पर दुःखों के कारणभूत क्षणभंगुर पुनर्जन्म को अर्थात संसार को महापुरुष प्राप्त नहीं होते। परम सिद्धि अर्थात भगवत्–लोक को प्राप्त कर लेते हैं। वहाँ से फिर संसार में आना ही नहीं होता।

● ● ●

योगयुक्त्या तु तद्भस्म दलाव्यमानं समन्ततः।
शाक्तेनामृतवर्षेण ह्यधिकारान्निवर्तते।।

(वृहज्जाबाल)

जो योगानुष्ठान के द्वारा शक्ति की अमृत वर्षा से उस भस्म को चारों ओर से प्लावित कर देता है वह प्रकृति के अधिकार से मुक्त हो जाता है।

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक–पत्र

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्प्राप्त्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

वर्ष : 51 अंक : 11–12

नमस्ते देवदेवाय ब्रह्मणे परमेष्ठिने।
पुरुषाय पुराणाय शाश्वताय जयाय च।।
नमः स्वयम्भुवे तुभ्यं स्रष्टे सर्वार्थवेदिने।
नमो हिरण्यगर्भाय वेधसे परमात्मने।।
नमस्ते वासुदेवाय विष्णवे विश्वयोनये।
नारायणाय देवाय देवानां हितकारिणे।।

देवाधिदेव, पुराण पुरुष, सनातन, जयस्वरूप परमेष्ठी ब्रह्म को नमस्कार है। सृष्टि करने वाले तथा सभी अर्थों के ज्ञाता स्वयंभू ! आपको नमस्कार है। हिरण्यगर्भ, वेधा, परमात्मा को नमस्कार है। विश्व के उत्पत्ति स्थान, देवों के हितकारी, वासुदेव, नारायणदेव विष्णु को नमस्कार है।

फरवरी–मार्च 2019

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सवांई (एत्मादपुर) आगरा

SIDDHYOG

HINDI MONTHLY
Propagating Yoga & Spiritual values

संस्थापक :
योग–योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :
आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई–बहिन

अनुक्रमणिका

1.	विशेष लेख– योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज	3
2.	सम्पादकीय– डॉ. दासलाल ब्रह्मचारी	8
3.	श्रीमद्भागवत में योग–परिचर्या– डॉ. विजय सिंह	11
4.	योग–क्षेम– श्री पं. किशोरी लाल शास्त्री	14
5.	चेतावनी– संत गरीब दास	18
6.	गुरु मृत्यु है– अन्नू राम यादव	19
7.	गंगापुर में बही योग की धारा– अनिल दुबे	23
8.	शुल्क समाप्ति की सूचना	25
9.	आश्रम समाचार	26
10.	योग सिद्धि द्वारा परकाय प्रवेश– श्री विजय कुमार	28
11.	शिष्यों के हित में सद्गुरुदेव की दिव्य शक्तियाँ– श्री आचार्य	33
12.	यशोवर्धन जैसी जाकी भावना वैसे वाके राम– श्री ब्रह्मचारी ब्रजमोहन	37

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 180.00
द्विवार्षिक	: रु. 360.00
आजीवन	: रु.1000.00

विशेष लेख

संकीर्तन मन की एकाग्रता का ठोस साधन

योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

ध्वनि भी मन की एकाग्रता का कारण बन सकती है ''नास्ति नाद सदृशो लयः'' के नियमानुसार नाद समाधि का एक ठोस साधन है। अभी संकीर्तन हो रहा था कुछ बच्चों की आँखें बन्द थीं और संकीर्तन बोल रहे थे कुछ बच्चे आँखें खोलकर बैठे हुये थे। मेरा यह अनुभव है कि यदि ठीक ढंग से ध्वनि उठाकर के संकीर्तन किया जाये तो इससे बहुत जल्दी मन की एकाग्रता हो जाया करती है। जहाँ-जहाँ ऐसा हुआ वहाँ एकाग्रता लोगों की बनी। जिस समय मैंने पहले पहल सवाई आश्रम में योग प्रचार करना प्रारम्भ किया उसमें जो व्याख्यान का क्रम था वह बहुत बाद में शुरू हुआ किन्तु पहले ध्वन्यात्मक संकीर्तन हुआ करता था। मैंने एक दिन देखा इस प्रकार से संकीर्तन से चालीस व्यक्ति समाधिस्थ थे जिनके मनों के अन्दर एकाग्रता थी जो काफी लम्बे समय के बाद ध्यान से उठे। यहाँ तुम देख रहे थे एक देवी, संकीर्तन करते-करते गिर पड़ी थी। पास वालों के उठाने पर भी वह नहीं उठी। जैसा कि मैंने तुम्हें अभी बताया कि योग प्रचार के आरम्भ के दिनों में व्याख्यान अधिक नहीं दिया करते थे किन्तु साधकों के जीवन को यथार्थ रूप से बनाने की चेष्टा करते थे। जिला करनाल में कुराना गाँव में हमने संकीर्तन कराना आरम्भ किया। यह गाँव मेरी जन्म भूमि अलुपुर के पास ही है। उस समय के संकीर्तन में भी लोगों के मनों में बहुत एकाग्रतायें प्राप्त हुई। कुराने में भी जैसे सवाई गुफा में संकीर्तन में लोग बेहोश हो जाया करते थे उसी प्रकार से लोग काफी संख्या में कीर्तन करते-करते बेहोश हो जाया करते थे और एकदम ध्यानस्थ हो जाया करते थे। उनमें कुछ लोग आज भी हैं। उसी संकीर्तन के प्रभाव से उनकी ध्यान स्थिति बढ़ती चली गई। उस संकीर्तन का प्रभाव यहाँ तक बढ़ा कि पशुओं पर भी उसका प्रभाव होने लगा। कुराने में हमारे मास्टर हरि प्रसाद इस बात को जानते हैं। वहाँ कुराने में आश्रम की बाहरी दीवार के साथ ही किसान लोग बैलों से कोल्हू पिराया करते

थे और गन्ने का रस निकाल कर गुड़ बनाया करते थे। आज तो इस प्रकार कर रिवाज नहीं रहा है। वहाँ एक किसान के कोल्हू पिराने की बारी उसी समय आती थी जब हमारा संकीर्तन चलता था। संकीर्तन की ध्वनि के प्रभाव से उसका बैल खड़ा हो जाता था उसकी आँखें ऊपर चढ़ जाती थीं और मारने पीटने पर भी वह आगे नहीं बढ़ता था। उस किसान ने मुझ से आकर कहा कि आप यह ''नमामी शम्भो'' बन्द कर दें। मैंने कहा—क्यों बन्द कर दें? वह कहने लगा—हमारा बैल ध्वनि सुनते ही खड़ा हो जाता है और हम अपनी बारी का लाभ उठा नहीं पाते। हमने उससे कहा—भई! तू अपनी बारी दिन में ले ले। हम अपना संकीर्तन उसी समय करेंगे जिस समय हम करते हैं। हम इसे बन्द नहीं करेंगे। उस समय आश्रम की दीवार से लगे घरों के मेहतरों के लड़के भी संकीर्तन बोला करते थे और उनके मनों में भी एकाग्रता पैदा हुई। एक मेहतर के लड़के को इसी संकीर्तन के प्रभाव से दिव्यानुभूतियाँ प्रारम्भ हो गई। उस एकाग्रता में उसने अनुभव किया कि अमुक अशुभ कर्म के कारण मुझे मेहतरों के घर में जन्म लेना पड़ा है उसे यह भी ज्ञान हो गया कि उसका यह शरीर कितने दिन और रहेगा। उसने अपने अनुभव की बात औरों से भी कही। उसने बताया कि आज से उन्नीसवें दिन मेरा यह शरीर छूट जायेगा और अमुक गाँव में एक ब्राह्मण के घर में मेरा जन्म होगा। उसकी बात पर किसी ने विश्वास नहीं किया। अन्त में उन्नीसवें दिन उसने कहा—आज मैं अपने इस शरीर को छोड़ दूँगा। गुरु जी तो शायद हमारे घर में आयेंगे नहीं तुम हमारे मास्टर जी (हर प्रसाद) जो हमें पढ़ाया करते हैं उनको यहाँ बुला लाओ। घर वाले मास्टर हर प्रसाद को घर बुला ले गये। उसने मास्टर हर प्रसाद को बताया—अब मैं दो चार घण्टे का मेहमान हूँ। उसके बाद मैं अपने इस शरीर को छोड़ दूँगा और अमुक गाँव में अमुक ब्राह्मण के घर मेरा जन्म होगा। पिछले जन्म के क्लिष्ट कर्म के कारण इस घर में आना पड़ा था। निश्चित समय पर उसने शरीर छोड़ दिया और जहाँ उस लड़के ने बताया था वहाँ उस ब्राह्मण के घर एक वर्ष बाद एक लड़के ने जन्म ले लिया। यह सब हमारे उस संकीर्तन का प्रभाव था जिससे उसे अगले पिछले जन्मों के संस्कारों का साक्षात्कार हो गया। अस्तु! मुझे अपने पहले के समय की लाहौर की बातें याद आ रही हैं। मेरी तो बार-बार भावना बनी रहती है कि मैं एक बार लाहौर जाकर अपने पुराने स्थानों को देख आऊँ। लाहौर में हमारा तीन स्थानों पर आश्रम रहा। सबसे पहले परीमहल में रहा। इसके बाद कृष्णा गली नं. 2 में रहा और रावी रोड पर मेहता हाफटोन कं. वालों ने जमीन दी थी कुछ कमरे भी उन्होंने बनाकर दिये थे। एक बार अमृतसर में हुकुम चन्द ने आकर कहा—महाराज जी! आप लाहौर में आश्रम क्यों नहीं बनाना चाहते। लाहौर तो बड़ी जगह

है वहाँ पर ही आश्रम बनना चाहिए। आप को तो अपने जन्म स्थान की ममता है। श्री प्रभु जी ने हुकुम चन्द से कहा—हुकुम चन्द! यह जो तुम्हें रावी रोड पर जमीन मिली है यह भी एक दिन तुम्हारे पास नहीं रहेगी वहाँ आश्रम बनाना तो पैसा खराब करना ही है। श्री प्रभु जी ने भारत-पाकिस्तान बंटवारे की बात पहले ही बता दी थी। सब से पहले मेरे बड़े गुरु भाई ब्र. गोपालानन्द जी ने परीमहल आश्रम में योग प्रचार कराना आरम्भ किया।

संकीर्तन भी साथ-साथ चलता था। कृष्ण गली नं. 2 में जो आश्रम था उसका मालिक एक दिन ब्र. गोपालानन्द जी के पास आया कि हमारा वह मकान आप ले लें। हम दो तीन वर्ष तक तो कोई किराया नहीं लेंगे उसके बाद जो भी आप दे देंगे हम ले लिया करेंगे किन्तु एक बात यह है कि वहाँ जो भी रहता है मर जाता है। वहाँ भूत पत्थर बरसाते हैं इसलिये वहाँ कोई रहता नहीं है। ब्र. गोपालानन्द जी ने कहा—ठीक है हम उस मकान को ले लेंगे। ब्र. गोपालानन्द जी ने उस मकान में एक बड़ा सा हाल चुन लिया और उसमें छः महीने का अखण्ड संकीर्तन रख दिया। दिन रात भगवत् संकीर्तन चलता था। मैंने तुम्हें एक दिन पहले भी बताया था कि ब्र. गोपालानन्द जी के लिये वरदान था कि जहाँ भी संकीर्तन करायेंगे वहाँ लोगों को मन की एकाग्रता हो जायेगी। कृष्ण गली नं. 2 में जब संकीर्तन चलता था उस समय मैंने एक दिन देखा सैंकड़ों व्यक्ति बेहोश पड़े थे। तुम्हें यह सुन कर आश्चर्य होगा कि मुनि की रेती ऋषिकेश वाले स्वामी शिवानन्द जी भी उस संकीर्तन में बेसुध पड़े थे। एक और आर्य समाज के बहुत अच्छे प्रचारक स्वामी सत्यानन्द जी को भी हमने अपने संकीर्तन में बेहोश देखा था। स्वामी सत्यानन्द जी ने स्वामी दयानन्द की जीवनी **''दयानन्द प्रकाश''** लिखी है। इस प्रकार स्वामी जी की श्रद्धा बढ़ती गई और उन्होंने **'भक्ति प्रकाश'** नामक पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने राम नाम की महिमा लिखी। उन्होंने अपनी उस पुस्तक में हमारे संकीर्तन का भी जिक्र किया है। ब्र. गोपालानन्द जी ने अखण्ड संकीर्तन करके उस कमरे को सिद्ध कर लिया और यह नियम बना दिया कि वहाँ केवल ध्यानाभ्यासी ही ध्यान में बैठें। पच्चीस तीस ध्यानाभ्यासी वहाँ बैठे रहा करते थे जिनका ध्यान वैसे नहीं लगता था वहाँ पर बैठने से लग जाता था। इस प्रकार बहुत से योगी ध्यानी वहाँ से बन गये। कृष्णा गली नं. 2 के बाद हमारा आश्रम रावी रोड पर भी रहा किन्तु उस समय ब्र. गोपालानन्द जी का देहावसान हो गया। मैं जिस बात को बताना चाहता हूँ वह यह कि संकीर्तन करते हुये जो ध्वनि उत्पन्न होती है उसकी उत्पत्ति उस एक तत्व से होती है।

एकतत्व का अभिप्राय सद्गुरु तत्व से है। कीर्तन करते-करते यही यदि ढंग से बोलोगे, लय और ध्वनि के साथ **''नमामि शम्भो, नमामि शम्भो''** का उच्चारण करोगे तो तुम

देखोगे कि तुम्हारे अन्दर भी बेहोशी आने लगेगी। उस बेहोशी में एक तत्व रहता है। जिस प्रकार से अभी एक देवी बेहोश होकर गिर पड़ी थी उसी प्रकार तुम्हारी भी हालत हो जायेगी। हम अपने योग प्रचार कार्यक्रमों में श्री प्रभुजी के यौगिक चरित्र सुनवाया करते हैं तथा संकीर्तन का भी कार्यक्रम चलता है। यह मन की एकाग्रता का एक ठोस साधन बन जाता है। यदि हम अपने मन को एकाग्र करके नाम का उच्चारण करते हैं तो मन अवश्य एकाग्र हो जायेगा। हम श्री प्रभु का स्वरूप सामने क्यों रखते हैं? देखा! मद्रास की रानी पद्मावती ने काम कोटि के शंकराचार्य स्वामी श्री चन्द्र शेखर सरस्वती के पास श्री प्रभु जी का चित्र लेकर उनसे पूछा–यह चित्र कैसा है? उन्होंने कहा–ये स्वयं नारायण है, स्वयं नारायण हैं। फिर कहने लगे इस चित्र में हजारों को एक साथ मुक्ति देने की ताकत है, अर्थात् केवल मात्र प्रभुजी के स्वरूप को देखकर ध्यान में बैठ जाओगे तो एक तत्वाभ्यास हो जायेगा, इसके बाद जिनका मन ध्यान में न लगता हो उनका भी मन एकाग्र हो जायेगा। ध्यान बढ़ने लगेगा, आत्मिक शान्ति बढ़ती चली जायेगी। इसलिये हम तुम्हें कहा करते हैं कि श्री प्रभु जी के स्वरूप को सामने रखकर उनको प्रणाम करके ध्यान में बैठ जाया करो। बस! ऐसा करने से एकाग्रता आ जायेगी। तुम लोगों ने जहाँ से भी, जो भी मन्त्र लिया हो, उसे मेरुदण्ड को सीधा रखकर लगातार जपो! निरन्तर जाप करने से मन एकाग्र हो जाया करता है। मन्त्र बहुत अधिक लम्बा नहीं होना चाहिये। योगियों ने प्रणव मन्त्र '**ओम्**' के जाप को श्रेष्ठ बताया है। जपने के लिये छोटे से छोटा मन्त्र होना चाहिये। बीज मन्त्रों का जाप मन की एकाग्रता देता है। यदि किसी को कहीं से कोई मन्त्र न मिला हो तो **नमः शिवाय नमः शिवाय** का जाप करते रहो। मन्त्र जाप में साधक को तीन प्रकार की कृपायें मिलती हैं–एक तो शक्ति मिलती है उस मन्त्र के देवता की, इष्टदेव की। दूसरी सहायता उन सब सिद्धों की मिलती है जिन्होंने उस मन्त्र का जाप करके सिद्धि प्राप्त की है तथा तीसरी कृपा गुरुदेव की मिलती है, जिन्होंने मन्त्र का उपदेश दिया है। इस प्रकार मन्त्र को मेरुदण्ड को सीधा रखकर प्रतिदिन दो तीन घण्टे जप लिया करोगे तो धीरे–धीरे अन्त:प्रकाश प्रकट हो जायेगा। देखो! जब तुम माँ के पेट में पड़े हुये थे तो तुमने भगवान् से प्रतिज्ञायें की हुई हैं। सातवें माह में गर्भ में जीव को ईश्वर दिव्य दृष्टि देता है जिससे उसे अगले पिछले जन्मों का तथा उनमें होने वाले सारे दुःखों का ज्ञान हो जाता है। पेट में पड़ा हुआ जीव ईश्वर से प्रतिज्ञा करता है।

यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत्प्रपद्ये नारायणम्।
अशुभ क्षय कर्तारम् फल मुक्ति प्रदायकम्।

यदि मैं इस नरक से छूट गया तो नारायण की शरण में जाऊँगा, महेश्वर की शरण में जाऊँगा जो सारे अशुभ का नाश कर मुक्ति प्रदान करने वाले हैं आगे कहता है—

यदि योन्या: प्रमुच्येऽहं सांख्ययोगमभ्यसे।

अर्थात् यदि मैं गर्भ से बाहर आ जाऊँगा तो मैं सांख्य योग का अभ्यास करूँगा, जिससे मैं अपने शाश्वत् स्वरूप को प्राप्त हो जाऊँगा। इस प्रकार से नाना प्रकार से ईश्वर से प्रतिज्ञायें करता है। किन्तु पेट से बाहर आते ही सब कुछ भूल जाता है। इसलिये जब तक शरीर स्वस्थ है, बुढ़ापा दूर है, इन्द्रियों में शक्ति है योगाभ्यास की कमाई कर लो! गुरु मन्त्र का खूब जाप करो! गुरु तो ऐसी चीज है जिससे भीतर से शक्ति मिलती है। कुछ हाथ पैर तो हिलाओ। परमात्मा सबका गुरु है। प्रयत्न करने वालों की सहायता अवश्य करता है। कम से कम इतना तो कर लो मनुष्य जन्म दोबारा मिल जाये। इसलिये ध्यान योग का अभ्यास करो। प्रभु जी की कृपा होगी, सबका भला होगा।

'भगवान कृष्ण चन्द्र' का योगेश्वर्य सर्वत्र दिखलाई देता है। उन योगेश्वर की आज्ञा है, सबको योगी बनने की। यदि बीच में भी भ्रष्ट हो जाओगे तो दिव्य स्वर्ग में बहुत समय तक वास करने के बाद पवित्र, धनवान और योगियों के घर ही जन्म लोगे—यह भगवान का सबको उपदेश है।'

—गुरुदेव

सम्पादकीय–

सिद्धयोग–हमारी प्यारी पत्रिका

–योगाचार्य डॉ. दासलाल जी महाराज

प्रिय पाठकगण/गुरु भाई–बहिन,

जय गुरुदेव की !

क्षण–क्षण स्मरणीय गुरुदेव योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के संकल्प से प्रकट कल्पवृक्ष के रूप में हमारी पत्रिका **'सिद्धयोग'** अपनी आयु के 51 वर्ष पूरा करके अप्रैल विशेषांक के साथ ही 52वें वर्ष में प्रवेश कर जाएगी। श्री गुरुदेव भगवान ने इस पावन वृक्ष का आरोपण सन् 1968 में किया था, जिसका एकमात्र लक्ष्य था कि योग जिज्ञासु इसके माध्यम से योग तत्व व सिद्धान्त को समझ लें जिससे योग मार्ग पर चलकर आध्यात्मिक उन्नति के चरम लक्ष्य की ओर वे चल सकें। आज के इस विकासशील युग में भौतिक उन्नति के साथ–साथ धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में भी जागरूकता आ गयी है। इसी क्रम में धार्मिक व आध्यात्मिक पत्र–पत्रिकाओं का भी समाज में व्यापक प्रचार कार्य चल रहा है। किन्तु 'सिद्धयोग' जिस प्रकार से योग के सैद्धांतिक दुरुह व दुर्बोध्य पक्ष को अत्यन्त सरल भाषा में बोधगम्य बना देती है ऐसा दूसरी पत्रिकाओं में देखने को नहीं मिलता।

'सिद्धयोग' गुरुदेव से सम्पर्क बनाये रखने का सक्षम माध्यम रही है। साधक घर बैठे ही गुरुदेव के उपदेश एवं आज्ञाओं का संकेत पा जाया करते हैं। पत्रिका के माध्यम से भी गुरुदेव की आत्मिक शक्ति का संचार शिष्यों में होता रहता है। साधकों के मन में उठने वाले संशयों का निवारण भी इससे हो जाता है।

वेदान्त प्रक्रिया में आत्म दर्शन की ओर चलने के साधन के रूप में तीन अंगों का वर्णन किया गया है। वेदान्त का सिद्धान्त है–**आत्मा वा अरेद्रष्टव्यः, श्रोतव्यः मन्तव्यः निदि–ध्यासितव्यः।** अर्थात् आत्मा का दर्शन करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम श्री गुरुदेव के मुख से आत्म तत्व के विषय में श्रवण करना चाहिए। श्रवण करने के पश्चात् मनन करना चाहिए। ठीक प्रकार से मनन हो जाने पर निदिध्यासन में बैठना चाहिए। निदिध्यासन ही योग की भाषा में ध्यान–योग का अभ्यास कहलाता है। श्री गुरुदेव जब शिष्य को उपदेश करते

है तो शब्द के माध्यम से शिष्य पर शक्ति संचार होता है। योग के ग्रन्थों में शक्तिपात की अनेक प्रकार की दीक्षाओं का वर्णन मिलता है। इनमें संकल्प दीक्षा, स्पर्श दीक्षा, दृग दीक्षा, हार्द दीक्षा आदि दीक्षाओं का वर्णन मिलता है। गुरुदेव दीक्षा दान के समय गुरुमन्त्र के माध्यम से शिष्य के दाहिने कर्ण में शक्ति का संचार करते हैं। आनन्दकन्द श्री गुरुदेव भगवान् ने 'सिद्धयोग' परम्परा को अक्षुण्ण रखा है। सिद्धयोग के पठन से कोई भी योग जिज्ञासु योग की परिभाषा, स्वरूप, विधि एवं लक्ष्य समझ सकता है। श्रद्धालु साधकों में सिद्धयोग के माध्यम से ही गुरुदेव के दर्शन एवं कृपालाभ होते देखा गया है। जीवन से परेशान कई व्यक्तियों को सन्मार्ग मिला और जीवन की धारा ही बदल गयी। पत्रिका के पठन-पाठन एवं अनुशीलन से उत्साह, उल्लास एवं मार्गदर्शन मिलता है। योग शास्त्र अत्यन्त गहन है, इसके दुरूह विषयों को समझना बहुत कठिन है, किन्तु सिद्धयोग ने इसे अत्यन्त सरल एवं सुबोध्य बनाया है। पत्रिका का अध्ययन साधक के अन्दर श्रद्धा का बीज बो देता है। जिसे योग साधना की नींव माना गया है। जिसमें सम्यक् श्रद्धा नहीं है, वह विनष्ट हो जाता है। भगवान के गीता में वचन है—''**संशयात्मा विनश्यति**'' अर्थात् संशय युक्त व्यक्ति पथभ्रष्ट होकर पतन की ओर चला जाता है। इसलिए 'सिद्धयोग' श्रद्धा एवं स्वाध्याय का अचूक साधन है। साधक को स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुदेव अपने शिष्यों को उपदेश करते हुए कहते हैं कि—''**स्वाध्यायाद् मा प्रमदितव्यम्**'' अर्थात स्वाध्याय में कदापि प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुमन्त्र का जाप भी उत्तम श्रेणी का स्वाध्याय है, इसमें प्रमाद या लापरवाही नहीं करनी चाहिए। अस्तु।

पत्रिका के लिए, गुरुदेव के समय से ही, किसी प्रकार की विज्ञापन आदि सामग्री प्रकाशनार्थ स्वीकार कर वित्तीय आय जुटाने अथवा सहायता प्राप्त करने का उद्देश्य नहीं रहा है, वह आज भी यथावत् है। 25–30 हजार रुपये का वार्षिक घाटा सहन करके भी पत्रिका अबाध गति से प्रकाशित हो रही है, यह सब पूज्य गुरुदेवजी की कृपा का ही फल है। उदारमना गुरुभाई-बहिनों के आर्थिक सहयोग से घाटे की पूर्ति हो जाती है।

अन्त में, मैं उन सभी मनीषी विद्वान लेखकों एवं रचनाकार कवियों के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनके उत्कृष्ट योगपरक लेख एवं सारगर्भित रचनाओं से पत्रिका की महत्ता व शोभा बनी हुई है। मैं उनसे इसी प्रकार अपनी रचनायें, लेखादि निरन्तर भेजते रहकर स्नेह भाव बनाये रखने का नम्र अनुरोध करता हूँ। पत्रिका के पाठकों व ग्राहकों से भी निवेदन करूँगा कि वे नियमित ग्राहक बने रहें तथा कम से कम

5 नये सदस्य अवश्य जोड़ें। इस दिशा में गंगापुर मंडल, कानपुर मंडल व सहारनपुर मंडल के साधकों का प्रयास वस्तुतः स्तुत्य है। इस अंक के साथ ही वार्षिक ग्राहकों का शुल्क समाप्त हो रहा है, अतः समय पर आगामी वर्ष के लिए शुल्क भेज दें। वार्षिक शुल्क रु. 190/– हो गया है तथा आजीवन शुल्क रु. 1000/– हो गया है।

आप सभी के लिए आने वाला वर्ष मंगलमय हो।

आनन्दकन्द श्री प्रभुजी का परम पावन प्राकट्य दिवस श्री रामनवमी योग महोत्सव के रूप में सवाँई आश्रम, आगरा में बड़े हर्षोल्लास व धूमधाम से मनाया जायेगा, सभी श्रद्धालु भक्त उसमें सम्मिलित होकर श्री प्रभुजी की कृपा कोर को पाकर जीवन को धन्य बना लें। इस अवसर पर श्री प्रभुजी के चरणों में सभी भक्तों का कोटि–कोटि नमन है।

श्री रामनवमी योग महोत्सव दिनांक 11, 12 व 13 अप्रैल 2019 को मनाया जाना निश्चित हो चुका है।

सभी गुरु भक्तों को चाहिये कि श्री रामनवमी के पवित्र उत्सव पर धाम पर पहुँचें तथा गुरुदेव की कृपा को प्राप्त करें। जो यह मानते है कि गुरुदेव तो है नहीं वहाँ जाकर क्या करेंगे यह उनकी महान भूल है। गुरुदेव की शक्ति तो अनवरत बरसती रहती है। गुरुदेव कहा करते थे कि श्री सिद्धगुफा से ही सारी दुनिया को योग का प्रकाश मिल रहा है। अतः सभी आश्रम की शाखाओं के संचालकों को चाहिये स्वयं भी आवें और अन्य गुरु भक्तों को भी पवित्र धाम के दर्शन करावें ताकि योग ध्यान में उत्तरोत्तर उन्नति पा सकें। जीवन में यदि आत्म दर्शन पा लिया तो अत्युत्तम बात है अन्यथा 'महती विनष्टि' महान संपात की बात है–बहुत बड़ी हानि की बात है। अतः आत्मदर्शन का लक्ष्य सामने रखते हुए **'कार्यम् वा साधयम् देहं वा पातेयम्'** अर्थात् या तो आत्मसिद्धि रूप महान कार्य को सिद्ध करूँगा या मेरा देह पात हो जाए तब भी कोई चिन्ता न मानते हुए सतत् आत्म लाभ की ओर अग्रसर रहना चाहिये। भौतिक भोगवाद प्रपञ्च है अपने साथ धोखा है। अतः सत्य की प्राप्ति के लिए प्राणपण से लग जायें।

जय गुरुदेव जी की।

आपका

डॉ. दासलाल योगाचार्य

संपादक–सिद्धयोग

।। ॐ श्री रामलाल प्रभवे नमः।।

श्रीमद्भागवत में योग-परिचर्या

डॉ. विजय सिंह

भगवान श्री कृष्ण युग-चक्र प्रवर्तक हैं। इन्द्र के अहंकार मर्दन हेतु, प्रतिवर्ष इन्द्र-योग जो नन्दबाबा और गोपों के द्वारा अनुष्ठानित होता था, उसे अपने अकाट्य तर्कों से लोगों को समझा कर बन्द करा दिया और जो विराट तैयारियाँ की गई थी उससे गोवर्धन देव की पूजा कराई गयी। स्वयं एक विराट रूप धारण कर गोवर्धन पर प्रकट हो प्रत्यक्ष अर्पित भोग को आरोगा।

भगवान श्रीकृष्ण ने नन्दबाबा से कहा-बाबा! हम मनुष्य समझे-बे समझे अनेकों कर्म करते हैं। उनमें समझ से किये कर्म सफल होते हैं, वैसे बेसमझ वालों के नहीं। अतः इस समय जो क्रिया योग (इन्द्र-यज्ञ) करने जा रहे हैं क्या ये शास्त्र सम्मत हैं अथवा लौकिक हैं?

तत्र तावत् क्रियायोगो भवतां किं विचारितः!

अथवा लौकिक स्तन्मे पृच्छतः साधु मण्यताम्।।7।।

(अ. 24 स्कं. 10 पूर्वार्ध)

भगवान ने कर्म के सिद्धान्त को यहाँ नन्दबाबा को समझाया है। प्राणी अपने कर्म के अनुसार पैदा होता और कर्म से ही मर जाता है। उसे, उसके कर्मानुसार सुख-दुख, भय और मंगल की प्राप्ति होती है। रजोगुण की प्रेरणा से मेघगण सब कहीं जल बरसाते हैं। उसी से अन्न और अन्न से सब जीवों की जीविका चलती है। इसमें भला इन्द्र का क्या लेना-देना? वह भला क्या कर सकता है?

रजसा चोदिता मेघा वर्षन्त्यम्बूनि सर्वतः।

प्रजास्तैरेव सिद्धयन्ति महेन्द्रः किं करिष्यति।।23।।

(अ. 24 स्क. 10 पूर्वार्ध)

भगवान ने कहा हमें गौओं, ब्राह्मण और गिरिराज का यजन करना चाहिये। भगवान ने जैसा कहा वैसा ही सभी ने स्वीकार कर लिया। भगवान श्री कृष्ण ने गोपों के विश्वास हेतु गिरिराज के उपर एक दूसरा विशाल शरीर धारण कर प्रकट हुवे। ''मैं गिरिराज हूँ''

उद्घोष करते हुये भेंट की सामग्री साक्षात खाने लगे। भगवान श्रीकृष्ण ने अपने उस स्वरूप को अन्य ब्रजवासियों के साथ प्रणाम किया और बोले–आश्चर्य है! गिरिराज ने साक्षात् प्रकट होकर हम पर कृपा की है।

कृष्णस्त्वन्यतमं रूपं गोपविश्रम्भणं गतः।
शैलोऽस्मीति ब्रुवन् भूरि बलिमादद् बृहद्वपुः।।35।।
तस्मै नमो व्रजजनैः सह चक्रेऽऽत्मनाऽऽत्मने।
अहो पश्यत् शैलोऽसौ रूपी नोऽनुग्रहं व्यघात।।36।।

(अ. 25 स्क. 10 पूर्वार्ध)

इस प्रकार पूजन एवं परिक्रमा कर ब्रज के सभी लोग ब्रज लौट आये।

इन्द्र को जब ज्ञात हुआ तो वह अपमान से तिलमिला कर ब्रज को डुबो देने हेतु मरुद्गणों के साथ स्वयं ऐरावत पर चढ़ आया। मूसलाधार पानी बरसाकर सारे ब्रज को पीड़ित करने लगा। ब्रज जलमग्न हो गया। लोग ओलावृष्टि एवं ठण्ड से काँपने लगे। काँपते–काँपते भगवान के चरण शरण में पहुँचे। श्रीकृष्ण! तुम ही हमारे एकमात्र रक्षक हो।

इन्द्र की इस हेकड़ी एवं बिना मौसम के जलवृष्टि को देख भगवान ने अपनी योगमाया का आश्रय ले इन्द्र का घमण्ड चूर करने हेतु खेल–खेल में गोवर्धन को उखाड़ लिया और सभी ब्रजवासियों को गोधन के साथ पर्वत के गड्डे में आराम से बैठा लिया। वे सतत् सात दिन–रात्रि सब ब्रजवासियों के समक्ष पीड़ा रहित पर्वत को उठाये रहे। वे एक डग भी इधर–उधर नहीं हुये।

श्रीकृष्ण की योगमाया का यह प्रभाव देख इन्द्र आश्चर्य चकित हो गया। उसकी अकल ठिकाने लग गयी। वह भौचक्का हो गया। वर्षा रोक दी।

कृष्ण योगानुभावं तं निशाम्येन्द्रोऽतिविस्मितः।
निःस्तम्भो भ्रष्टसंकल्पः स्वान् मेघान् संन्यवारयत्।।24।।

(अ. 25 स्क. 10 पूर्वार्ध)

भगवान की आज्ञा पाकर ग्वाल समाज अपने कुल कुटुम्बियों एवं गोधन के साथ उस जगह से निकल कर जब बाहर आ गये तब श्रीकृष्ण ने सबके देखते–देखते क्रीड़ावत् गोवर्धन को यथा स्थान पूर्ववत् रख दिया। उस समय आकाश में आये देवता, साध्य, सिद्ध आदि पुष्प वर्षा करते हुये स्तुति गान करने लगे।

इधर ब्रजवासी बाल्यकाल से लेकर अब तक श्रीकृष्ण ने जो अद्भुत कर्म किये थे उन

सबकी अत्यन्त भाव से चर्चा करते हुये ब्रज की ओर प्रस्थान किये।

नन्दबाबा ने लोगों को समझाया—देखो भाई! महर्षि गर्ग ने इस बालक को देखकर कहा था—नन्द! यह बालक प्रत्येक युग में शरीर ग्रहण करता है। श्वेत, रक्त और पीत रंग पहले स्वीकार कर चुका है। इस बार यह कृष्ण वर्ण हुआ है। नन्द! यह गुण से, ऐश्वर्य और सौन्दर्य से, कीर्ति और प्रभाव से नारायण के ही समान है, अतः इसके द्वारा किये अलौकिक कार्यों को देखकर आश्चर्य नहीं करना। यह सब विवरण छब्बीसवें अध्याय में वर्णन किया गया है। सत्ताइसवें अध्याय में इन्द्र द्वारा क्षमा प्रार्थना मांगना और ब्रह्मा जी की प्रेरणा से कामधेनु द्वारा श्रीकृष्ण का अभिषेक करने का वर्णन है।

लज्जा युक्त इन्द्र ने श्रीकृष्ण के चरणों में गिरकर प्रणाम किया और कहा—प्रभो! मेरे अभिमान का अन्त नहीं है, क्रोध भी मेरे बस के बाहर है। परन्तु प्रभो! आपने मुझ पर बहुत कृपा किया। मेरा घमण्ड को जड़ से उखाड़ दिया। आप मेरे स्वामी हैं, गुरु हैं, व मेरे आत्मा हैं। मैं आपकी शरण में हूँ।

त्वयेशानुगृहीतोऽस्मि ध्वस्तस्तम्भो वृथोद्यमः।
ईश्वरं गुरुमात्मानं त्वामहं शरणं गतः॥3॥

भगवान ने कहा—इन्द्र! ऐश्वर्य मद में तुम मतवाले हो रहे थे। तुम पर अनुग्रह हेतु तुम्हारा यज्ञ भंग किया। अब तुम नित्य मेरा स्मरण रखना। इन्द्र तुम्हारा मंगल हो अब अमरावती जाओ।

उसी समय कामधेनु ने गोपवेषधारी श्रीकृष्ण की वन्दना की और कहा—सच्चिदानन्दस्वरूप श्रीकृष्ण! आप महायोगी—योगेश्वर हैं। आप स्वयं विश्व हैं। विश्व के परम कारण तथा अच्युत हैं। सम्पूर्ण विश्व के स्वामी आपको रक्षक के रूप में प्राप्त कर हम सनाथ हो गयीं—

कृष्ण—कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वसम्भव।
भवता लोकनाथेन सनाथा वयमच्युत॥9॥

(अ. 27 श्लो.10 पूर्वार्ध)

अनेक प्रकार से स्तुति गान कर कामधेनु ने अपने दूध से, देवमाताओं की प्रेरणा से देवराज इन्द्र आकाशगंगा के जल से श्रीकृष्ण का अभिषेक किया और गोविन्द नाम से सम्बोधित किया। उस समय वहाँ ऋषिगण, गंधर्व, सिद्ध सभी श्रीकृष्ण के यश का गान करने लगें।

योग-क्षेम

(श्री पं. किशोरी लाल शास्त्री, झांसी)

यत्र योगेश्वर कृष्णो यत्र पार्थो धनंजजयः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।।

सर्व शक्तिमान्, आनन्दकन्द, अनाधनन्त परब्रह्म परमात्मा की इस अचिन्त्य 'अतक्र्य सृष्टि को देखकर बड़े-बड़े तार्किक तथा विज्ञानवादी और भक्त लोग उसकी 'अघटन घटना घटीयसी महामाया' के प्रभाव को समझने में अपने को असमर्थ पाकर नेति-नेति कहकर अपनी ज्ञानविज्ञान यात्रा को स्थगित कर देते हैं। किंकर्तव्य विमूढ़ होकर या तो नास्तिक हो जाते हैं या फिर अधीर बालक की तरह करुण-क्रन्दन करते हुए सर्वथा असमर्थ असहाय होकर आत्म समर्पण कर देते हैं और अपनी यथार्थ स्थिति को स्वीकार करते हुए पुकारते हैं-

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समानहि।
एव ज्ञात्वा महादेवि! यथेच्छसि तथा कुरु।।

इस प्रकार में आधुनिक तार्किक लोग दो शंकाओं में अभिभूत हो जाते हैं, क्या वह परब्रह्म परमात्मा स्त्री है? जैसी इच्छा हो वैसा करो? इस प्रकार उन्हीं के ऊपर क्यों न छोड़ा जाय? ऐसा क्यों न कहा जाये "कि (यथा योग्यं तथा कुरु) जैसा योग्य हो वैसा करो?

प्रथम शंका को इस कारण से निर्मूल है कि वह लिंग भेद से परे है। दूसरे वह सर्व शक्तिमान है इससे वह स्त्री रूप में भी प्रकट हो सकता है जैसा कि उपनिषद् की एक गाथा में स्पष्ट ही वर्णन किया गया है-

एक बार देवासुर संग्राम में देवताओं की विजय हो गई तब सब देव परस्पर अपनी अपनी भुजा पुजाने के चक्कर में पड़ गये (यह भी उसकी अकारण करुणा ही थी) इन्द्र, अग्नि, वायु, वरुण सभी अपने-अपने बल को ही वियज का प्रधान कारण कहने लगे। तब आकाश में एक विशाल प्रकाश पुंज प्रकट हो गया जिसे देखकर सब की आँखें चकचौंधी हो गई। सब के मन में कुछ घबड़ाहट और भय का संचार हुआ परन्तु अतीत विजय के अभिमान से धैर्य धारण कर परस्पर कहने लगे कि इसको जानना चाहिये यह कौन सा

(यक्ष) या प्रभावशाली देव है? देवराज इन्द्र ने वायु को भेजा। वायुदेव को आया हुआ देखकर यक्ष ने पूछा तुम कौन हो? तुममें क्या शक्ति है? वायुदेव ने बड़े गर्व से कहा मैं प्रकम्पन (आंधी) हूँ, सर्व ब्रह्माण्ड को उड़ाकर ले जा सकता हूँ। तब यक्ष ने उसके सामने एक तृण घास का टुकड़ा रखकर कहा इसे हटाओ। वायु ने अपनी समग्र शक्ति का प्रयोग किया परन्तु वह तृण तो श्री हनुमान जी के पैर की तरह अचल हो गया हटने वाला कौन कहे वह तृण तो जरा भी न हिला। तब वायुदेव लज्जित होकर लौट आये। फिर इन्द्र ने अग्नि को भेजा। अग्नि से भी वही प्रश्न किये गये, अग्नि ने भी अखर्वगर्व से कहा कि मैं (पूर्ण ब्रह्माण्ड को भस्म करने वाला) ज्वलन हूँ। इनके आगे भी यक्ष ने तृण रखकर जलाने को कहा परन्तु अग्निदेव की असह्य ज्वालाओं के बीच मे वह तृण इस प्रकार सुरक्षित रहा जैसे होलिका की चिता में प्रह्लाद। तब तो अग्नि देव भी शर्मिन्दा होकर वापस लौट आये। इस प्रकार सूर्य चन्द्र आदि सभी देवों ने अपने को सर्वथा असमर्थ देखकर उस यक्ष से मानसिक मूक प्रार्थना की। यक्ष ने भी अपने उमा स्वरूप का दर्शन दिया और सब देवों को समझाया कि आप लोग सृष्टि के कार्य मे अपना पूर्ण सहयोग करते रहें और प्रतिष्ठा, गौरव, अभिमान को पास न आने दें क्योंकि आप लोग तो बिजली से चलने वाली जड़ मशीनों (यंत्रों) के समान हैं यह सब विश्व विधान तो मेरी इच्छाशक्ति (विद्युत्पावर) से ही चल रहा है जिसका स्रोत ('एकोऽहं बहुस्याम्') इस तार (शब्द ब्रह्म) से चालू हुआ है।

ऐसी गाथाओं को जान कर और स्वयं अनुभव करके ही किसी भुक्त भोगी ने जिज्ञासुओं को सावधान करते हुए ठीक ही कहा है–

प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा, गौरवं शुद्ध रौरवम्।
अभिमानं सुरापानं, त्रयं त्यक्त्वा सुखीभवेत्।।

इस गाथा में ''हैमवती उमा'' शब्द आया है, जिसे देखकर सम्प्रदायवादियों में विशेष विचिकित्सा (संशय) का उदय होता है और उससे शैव लोग अपने को ही सच्चे ब्रह्म के उपासक मानकर अन्य सम्प्रदाय वालों को हेय दृष्टि से देखने लग जाते हैं। परन्तु यह उनका मिथ्याभिमान ही उन्हें लक्ष्य तक पहुँचने में बाधक हो जाता है। क्योंकि दूसरों के प्रति हेय भावना के उस ब्रह्म का ही अपमान होता है। भगवान श्रीकृष्ण जी ने भी इसी के प्रति सावधान करते हुए अर्जुन से श्रीमद् भगवद् गीता के छठवें अध्याय में स्पष्ट ही कहा है–

यो मां पश्यति सर्वत्र, सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि सच से न प्रणश्यति।।

सर्वभूत स्थितं यो मां भजत्येकत्व मास्थित।
सर्वथा वर्तमानापि, स योगी मयि वर्तते।।

यहाँ पर हैमवती शब्द से केवल हिमवान की पुत्री समझना ठीक नहीं है, हैमवती का अर्थ स्वर्ण प्रभावती है, इसी प्रकार उमा का अर्थ भी केवल मैना रानी के कहे हुए उमा शब्द का बोधक नहीं है जिसे कविकुल चूड़ामणि कालिदास ने अपने कुमार संभव काव्य में तपस्सा के रोकने के लिए प्रयुक्त किया है–

उमेति माना तपसा निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम।

यहाँ पर उमा शब्द में उकार तप और शंकर का बोधक होते हुए भी षष्ठी तत्पुरुष और द्वितीय तत्पुरुष में ही है क्या मा शब्द माङ् माने धातु का है निषेधात्मक मा अव्यय ही नहीं है, इससे यह उमा शब्द ब्राह्मी शक्ति का ही बोधक है। अतएव इस गाथा को किस सम्प्रदाय विशेष की समर्थिका ही नहीं कहा जा सकता–

दूसरी बात यह भी है कि ब्रह्म की शक्ति दो पदार्थ नहीं है बल्कि एक ही वस्तु के बोध के लिये लौकिक भाषा में दो प्रकार से कहा जाता है। साथ ही यह भी देखने में आया है कि मातृ शक्ति जितनी करुणामयी, सहनशील और उदार तथा क्षमामयी है उतनी पितृ शक्ति नहीं है इसी ने मातृशक्ति के रूप में पुकारने पर शीघ्र ही साधक को सफलता प्राप्त होती है। देखो न प्रलयंकर आशुतोष भगवान् शंकर जी के अवतार श्री आद्य शंकराचार्य जी के प्रशिष्य श्री शंकराचार्य जी ने कैसी अनिर्वचनीय करुणा प्रार्थना उस ब्रह्म शक्ति से की है–

कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीम्।
भवानि त्वत्पाणि, ग्रहण परिपाटी, फलमिदम्।।

आपत्सुमग्नः स्मरणं त्वदीयं
करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः,
क्षुधा तृषार्ता जननी स्मरन्ति।।
जगदम्ब विचित्रमत्र किं
परिपूर्ण करुणास्ति चेन्मयि।
अपराध परंपरा कृतं, नहि
माता समुपेक्षेते सुतम्।।

इस प्रकार द्वैत की साधना के द्वारा ही अद्वैत की सिद्धि होती है। संभव है अद्वैत ब्रह्म विशिष्टाद्वैत हो या द्वैत ही हो। क्योंकि उसके जान लेने पर तो जानने वाला पृथक् नहीं रहता (जानत तुम्हहि–तुम्हहि होजाई)। जैसे दूध में जल मिलने पर जल की पृथक् सत्ता नहीं रहती। परन्तु भक्तियोग वाले तो द्वैत ही में सुख मानते है। क्योंकि द्वैत बिना ब्रह्म सुख की अनुभूति किसे होगी। जब अनुभूति नहीं तो क्या पता कि वह सुख स्वरूप है भी या यों ही लोगों ने कल्पना कर रखी है। परन्तु अद्वैतवादी तो उसे मूकास्वाद वन् मानते हैं, जो कि द्वैत का ही प्रतिपादन है क्योंकि कहा जा सके या न कहा जा सके पर जब स्वाद है तब स्वाद्य और स्वादक दोनों है ही। अतएव इस द्वैता–द्वैत के पचड़े में न पड़ कर हमें तो उसकी सच्चिदानन्दानुभूति की प्राप्ति का प्रयत्न करना ही चाहिए। यह तभी हो सकता है जब हम आत्म समर्पण में आई हुई दूसरी यथायोग्य तथा कुरु वाली कुतर्क कल्पना को त्याग कर ''यथेच्छसि तथा कुरु'' यही प्रार्थना करें। इसी प्रार्थना से ही ''कुपुत्रो जायेत् क्वचिदपि कुमाता न भवति'' की सफलता मिल सकती है। इस प्रार्थना से ही माँ के दयापयोधरामृत का पान कर शाश्वत तृप्ति प्राप्त होती है।

''यथायोग्यं तथा कुरु'' कहने में तो अविश्वास की भावना स्पष्ट ही झलकती है जो कभी भी इस जीव को ब्रह्म के सम्मुख नहीं होने देती। प्रत्युत'' पीत्वा मोहमयीं प्रमाद मदिरा मुन्मत्त भूत जगत'' वाली श्रेणी में ही गिरा देती है इसी से योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण जी अर्जुन से बार–बार स्पष्ट कहते हैं–

सर्व धर्मान् परित्यज्य,
मामेकं शरणं ब्रज।
अहं त्वां सर्व पापेभ्यो,
मोक्षयिष्यामि माशुच:।।
अनन्याश्चिन्त यन्तो मां,
ये जना पर्युपासते।
तेषांनित्याभियुक्तानां,
योगक्षेमं बहाम्यहम्।।

श्री भगवान के इन वाक्यों में एक, अनन्य और नित्य इन तीन शब्दों से सावधान रहते हुए ही साधक को अपनी साधना करनी चाहिये। तभी वे प्रहलाद, मीरा, नरसी आदि भक्तों के समान ही आप का भी योगक्षेम वहन करेंगे। सावधान!

चेतावनी

(संत गरीब दास)

इस माटी के महल में, मगन भया क्यों मूढ़।
कब साहब की बंदगी, उस सांई को ढूँढ़।।

कुटिल बचन कूँ छाड़ि दे, मगन मनो कूँ मार।
सतगुरु हेला देत जनि, डूबै काली धार।।

नंगा आया जगत में, नंगा ही तू जाय।
बिचकर रवाबी ख्याल है, मन माया भरमाय।।

सुरत लगै अरु मन लगै, लगे निरत धुन ध्यान।
चार जुगन की बंदगी, एक पलक परमान।।

जार बार तन फूँकिया, होगा हा–हा–कार।
चेत सके तो चेतिये, सतगुरु कहैं पुकार।।

गुरु मृत्यु है

अन्तू राम यादव, तेलियर गंज, इलाहाबाद

प्रातः स्मरणीय अनन्त विभूषित श्री सद्गुरुदेव भगवान के पावन युगल चरणों में नमन करते हुए, आइए, हम सभी गुरुदेव भगवान से प्रार्थना करें कि हे गुरुदेव!

''गुरुदेव हमारे सर ऊपर, तेरी दया का हरदम हाथ रहे।
हे नाथ, अनाथ ना हो जायें, तू सदा हमारे साथ रहे।।''

उपरोक्त शीर्षक चौंकाने वाला हो सकता है परन्तु यह कथन वेद का है। वेद हिन्दू धर्म का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। चारों वेदों में ऋग्वेद भारत का ही नहीं अपितु इस धरती का प्राचीनतम् महान गौरव–ग्रन्थ है। प्रस्तुत विषय की चर्चा में भी केन्द्रीय भाव यही है कि हमारे दिलों में सद्गुरुदेव के प्रति श्रद्धा बढ़े और हम यह जान सकें, समझ सकें कि गुरुदेव अपने बच्चों के कल्याणार्थ किन–किन रूपों में प्रकट होते हैं।

मृत्यु शब्द सामने आते ही प्रायः हम भयभीत हो जाते हैं। हर देह धारी मृत्यु से दूर भागता है। मृत्यु का नाम लेना भी लोग पसन्द नहीं करते। विवेकवान व्यक्ति के मन में भी मृत्यु का भय छिपा रहता है। परम विवेक की स्थिति में मृत्यु को गले लगाने की बात आती है। सन्त कबीर का कथन है–

''जेहि मरने से जग डरे, मोरे मन आनन्द।
कब मरिहौं कब पाइहौं, पूरन परमानन्द।।''

अथर्ववेद, काण्ड–4, सूक्त–35 में यह उल्लेख मिलता है कि जैसे हर प्राणी मृत्यु से डरता है वैसे ही वैदिक ऋषि भी अपने तथा अपने पुत्र–पौत्रादि के लिए मृत्यु नहीं चाहते। हाँ, वे यह प्रार्थना अवश्य करते हैं कि मृत्यु हमारे शत्रुओं पर टूट पड़े। यह भाव चारों वेदों में बराबर प्रकट किया गया है। ऋग्वेद, मण्डल–10, सूक्त–18, मंत्र–4 में मृत्यु न आ जाये, मृत्यु से बचने के लिए एक अद्भुत उपाय का उल्लेख मिलता है। वैदिक ऋषि कहते हैं–''मैं यह पत्थर रखता हूँ जिससे कोई मृत्यु के पथ पर न आ जाये। मैं पत्थर से मृत्यु को दूर करता हूँ। हम सौ वर्ष तक जीवित रहें।'' मृत्यु से इतना भयभीत रहने के बावजूद भी

अथर्ववेद, काण्ड–18, सूक्त–2, मन्त्र–57 में वैदिक ऋषि बहुत उदार होकर कहते हैं–''हे मृत मनुष्य! तू पहले के पहने हुए वस्त्रों को छोड़ दे और इस नये शव–वस्त्र को पहन। अब यहाँ से तुझे कुछ नहीं मिलेगा अपितु जो तूने दूसरों को दान दिया है, पर सेवा की है उसी का फल तुझे आगे मिलेगा।''

सन्त जन बराबर हमें यह आगाह करते हैं, चेतावनी देते रहते हैं कि–

''भविष्य देह निज छूटि हैं, भूत न आवे हाथ।
वर्तमान चिन्ता हरे, कब होओगे सनाथ।''

भावार्थ यह है कि निश्चित रूप से भविष्य में हमारा शरीर छूट जायेगा, जो बीत गया है वह हाथ आने वाला नहीं है और वर्तमान में चिन्ता ने हमारा हरण कर लिया है। हे मानव! कब भजन–ध्यान करोगे, कब सद्गुरु शरण पाकर सनाथ होगे? सन्त जन कहते हैं–''हमें दो चीजें याद रखनी चाहिए, पहली मृत्यु और दूजे भगवान। वास्तव में अष्टांग योग का सच्चा पथिक वही हो सकता है जो मौत को सदैव याद करे। जब हम निरन्तर मौत को याद करेंगे तब हमारा उन्हीं कार्यों की तरफ अधिक झुकाव होगा जिनका उल्लेख अष्टांग योग में किया गया है। मौत हमें अनुशासित जीवन जीने की सीख देती है। सन्तों का मत है कि अनुशासन ही योग का प्रवेश द्वार है। योग दर्शन का पहला सूत्र ही अनुशासन से प्रारम्भ होता है–''अथ योगानुशासनम्''। अनुशासन का बड़ा विस्तृत क्षेत्र है। अनुशासित जीवन से हमारा अन्तःकरण शुद्ध होता है। अगर हमारा जीवन अनुशासित नहीं होगा तो हम सदैव पंच विषय–रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द की गिरफ्त में जकड़े रहेंगे। यही विषयासक्ति ही भव–बंधन एवं जन्म–मरण का मूल कारण है।

आइए अब हम अपने मुख्य विषय की तरफ चलें जो प्रस्तुत शीर्षक से संबंधित है। अथर्ववेद, काण्ड–11, सूक्त–5, मंत्र–14 में ऋषि अनेक महिमामय वचनों के साथ एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात कहते हैं। ऋषि कहते हैं–''**गुरु मृत्यु है**।''तभी तो कठउपनिषद् का पूरा आध्यात्मिक उपदेश मृत्यु यानी यम से कराया गया है। गुरु, शिष्य के शरीर को नहीं मारता। गुरु, शिष्य के विकारी व्यक्तित्व को मार कर उसे पवित्र जीवन रूपी दूसरा जन्म देता है। इसीलिए गुरु को मृत्यु कहा गया है। शिष्य, गुरु के उपदेश द्वारा अपने विकारी स्वरूप से मरकर दुबारा जन्म लेता है। इसीलिए दीक्षित–शिष्य द्विज कहलाता है। अब वह माता–पिता का व्यक्तिगत न रहकर सार्वभौमिक विचार सम्पन्न गुरु से जन्म लेकर स्वयं भी सार्वभौमिक हो जाता है। अथर्ववेद, काण्ड–6, सूक्त–133, मन्त्र–13 में गुरु कहते हैं–हे मनुष्य! तुम मुझे

एक पुत्र दे दो मरने के लिए। गुरु कहते हैं–"मैं जिस उद्देश्य के लिए ब्रह्मचर्य व्रत लेकर मृत्यु को समर्पित हो गया हूँ, उसी उद्देश्य के लिए समाज से मैं एक मनुष्य को मृत्यु के लिए माँगता हूँ। जब मुझे मृत्यु के लिए समर्पित ब्रह्मचारी मिलता है तब मैं उसे ज्ञान, तप और परिश्रम करने के लिए उसकी कमर में मेखला बाँधता हूँ।"

एक सन्त अपने प्रवचन में बता रहे थे। मस्त राम नाम का एक व्यक्ति नदी के किनारे बैठा था। नदी में एक मुर्दा बहता जा रहा था।

"मस्त राम मुर्दे से पूछा, मुर्दे कुछ बतलाओगे।
मुर्दे में से मुर्दा बोला, मर जाओ सुख पाओगे।"

भला मुर्दा क्या बोलेगा। इस कथन से हमें यही सीख मिलती है कि हम मुर्दे के समान हो जायें। जैसे मुर्दे की निन्दा करें अथवा प्रशंसा करें, उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता वैसे ही जब हमारा जीवन प्रतिक्रिया रहित होगा तब हम कल्याण मार्ग के पथिक बन सकते हैं। वास्तव में असली जीवन जीने की कला यही है कि हम जीते जी मर जायें। जब हम अपने को जीते जी "शव" बना लेंगे तभी "शिव" बन सकते हैं अर्थात् शिवत्व को प्राप्त कर सकते हैं। जीते जी मरने का तात्पर्य है–अपने विकारी व्यक्तित्व को मारना, पाँच विषयों एवं षट्विकारों को मारना, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या–द्वेष को मारना। जब तक इन्हें मारकर हम इन पर विजय प्राप्त नहीं कर लेते तब तक हम मोक्ष अथवा कल्याण–पथ के पथिक नहीं बन सकते अथवा यह कहें कि हम योगी नहीं बन सकते। गुरुदेव सर्वप्रथम इन्हीं विकारों को मारते हैं।

उपरोक्त विकारों में अहंकार सबका बाप है। यही सारे अनर्थों की जड़ है। योग मार्ग में सबसे बड़ी बाधा, सबसे बड़ा दुश्मन अहंकार ही है। सन्त कबीर कहते हैं–

"कबिरा गरब न कीजिए, काल गहे कर केस।
ना जाने कित मारिहैं, का घर का परदेस।"

कबीर साहेब मनुष्यों को आगाह करते हैं कि कभी भी अहंकार मत करो, क्योंकि मृत्यु ने तुम्हारे बाल को अपने हाथों में पकड़ रखा है। क्या पता घर में या बाहर कब अपना शिकार बना ले। ये पंक्तियाँ जब हमारे सामने होंगी तब हम किसका अहंकार करेंगे। पुनः कबीर साहेब कहते हैं–

"मरना, मरना सब कहे, मरना न जाने कोय।
कबिरा ऐसा मरना, बहुरि न मरना होय।।"

अर्थात् मानव जीवन की सार्थकता इसी में है कि हम ऐसी करनी करके मरें जिससे पुनः जनम–मरण के चक्कर में न पड़ें।

सभी भाई–बहनों एवं बच्चों से मेरा विनम्र निवेदन है कि प्रस्तुत लेख में मेरी भूल–सुधार करते हुए मेरी त्रुटियों को क्षमा करेंगे। निम्नांकित चन्द पंक्तियाँ श्री सद्गुरु चरणों में अर्पित करते हुए मैं अपनी लेखनी को विराम देता हूँ–

''ना छोड़ेंगे हम तेरा द्वार, सद्गुरु मरते दम तक,
मरते दम नहीं, अगले जनम तक।
अगले जनम नहीं, सात जनम तक,
सात जनम नहीं, जनम–जनम तक।
ना छोड़ेंगे हम तेरा साथ, सद्गुरु मरते दम तक।।''

सादर जयगुरुदेव !

श्री गुरुदेव जी का एक अकिंचन बालक–
अन्तू राम यादव

गंगापुर में बही योग की धारा

अनिल दुबे, दतिया (मध्य प्रदेश)

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी पंच दिवसीय सिद्धयोग साधना शिविर दिनांक 28 दिसम्बर से 1 जनवरी, 2019 तक महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज एवं सद्गुरु देव योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की असीम अनुकंपा से बड़ी ही धूम धाम के साथ मनाया गया। सिद्धयोग साधना शिविर सिद्धगुफा सवांई आश्रम के आचार्य योगी डॉ. दासलाल जी महाराज के यौगिक संरक्षण में प्रारम्भ हुआ। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार प्रातः 5 बजे मंगला आरती तदुपरांत एक घण्टे का ध्यानाभ्यास 7 बजे जीवन तत्व साधन, प्राणायाम इत्यादि, 10 बजे प्रभुजी की आरती, गीता पाठ सार प्रवचन, गुरुदेव के भजन सायं महाप्रभु जी की दिव्य आरती, भजन, संगीत, उसके उपरांत आचार्य जी के योग पर दिव्य व्याख्यान। यह क्रम पाँच दिन तक अनवरत चला।

आचार्य डॉ. दासलाल जी महाराज ने गीता के 18 अध्याय का पाठ कराया। गीता के अर्जुन विषादयोग, सांख्य योग, कर्मयोग ज्ञान कर्म सन्यास योग, आत्म संयम योग, ज्ञान विज्ञान योग, अक्षर ब्रह्मयोग, राज विद्या राज गुह्य योग, विभूति योग, विश्व स्वरूप दर्शन योग, भक्ति योग, क्षेत्र क्षेत्रज्ञ योग, गुणत्रय योग, पुरुषोत्तम योग, दैवासुर सम्पद्विभाग योग, श्रद्धात्रय योग एवं मोक्ष सन्यास योग के गूढ़ रहस्यों को बड़े ही सरल शब्दों में श्रोताओं के हृदय में उतार देना आचार्य जी की विलक्षण कला है। यह मानो की गुरुदेव भगवान की आचार्य जी के ऊपर असीम कृपा ही है। तभी तो कम समझ वाले भक्तों को भी वह गीता, योग के सिद्धान्तों को बड़ी ही सरल शब्दों में समझा देते हैं।

सायंकालीन आचार्य जी का योग सिद्धान्तों पर व्याख्यान विशेष रूप से ध्यान, कर्म वृत्तियों के प्रकारों पर विस्तारपूर्वक रहा एवं सरल शब्दों के माध्यम से भक्तों को श्रवण कराया गया।

अपने व्याख्यान में कहा शास्त्र के विपरीत कर्म नहीं करना चाहिए। जो शास्त्र के विपरीत कर्म करते है विकर्म कहलाते हैं और जिसने आत्म दर्शन कर लिया है। फिर भी कर्म करता चला जा रहा है, वह अकर्म कहलाता है। इसलिये बिना कर्म के आत्म साक्षात्कार नहीं हो सकता है। व्यक्ति को सदैव योग मार्ग पर प्रयत्नशील रहना चाहिये उसी को हम साधना कहते हैं।

आचार्य जी ने बतलाया योग क्यों करना चाहिये। हमारे बुद्धि में जितने भी संशय हैं। योग से सारे संशयों का निवारण हो जाया करता है। इसलिये ध्यान अभ्यास बढ़ाते रहना चाहिये उससे सारे संशयों का निवारण हो जाया करता है। हजारों की संख्या में विभिन्न–विभिन्न प्रांतों के गुरु भाई शिविर में पधारे। यह सौभाग्य का समय था जहाँ उ. प्र., म. प्र., बिहार, झारखण्ड, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, उत्तराखण्ड, दिल्ली आदि प्रांतों के गुरुभाइयों का एक साथ मिलन हुआ। एक दूसरे से इस प्रकार मिले जैसे सब कुछ प्राप्त हो गया हो ऐसे होते हैं। सच्चे गुरु भक्त सवाई, दतिया, बनारस, हरियाणा, गंगापुर सिटी के मण्डलों ने गुरुदेव के यादगार भजनों की प्रस्तुति दी। सवाई माधोपुर से पधारे श्री सीताराम जी एवं उनकी शिष्या ने शास्त्रीय संगीत की शानदार प्रस्तुती दी। गंगापुर सिटी निवासी श्री मुरारी जी जो इटली में कृष्ण भगवान की लीलाओं को नृत्य के माध्यम से प्रचार प्रसार करने वाले गुरुदेव के दरबार में पधारें और अपने नृत्य की कला के द्वारा सभी का मन मोह लिया एवं अद्‌भुत प्रस्तुति पेश की, तू कितनी भोली, तू कितनी अच्छी है, प्यारी–प्यारी ओ माँ, के गीत से कार्यक्रम की शुरुआत की। अंत में श्री मुरारी जी ने श्री आचार्य जी से आशीर्वाद वचन प्राप्त किये। 31 दिसम्बर 18 प्रातः 10 बजे का ऐतिहासिक दिन रहा। महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज एवं सद्‌गुरु देव योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की भव्य शोभा यात्रा गंगापुर सिटी के प्रमुख मार्गों से निकाली गयी। जगह–जगह आचार्य श्री दासलाल जी महाराज का गुरुभक्तों एवं धर्म प्रेमियों द्वारा पुष्प वर्षा, फूल मालाओं से स्वागत किया। सारे शहर में प्रसाद का वितरण भी हुआ। सारा वातावरण गुरुदेव जय–जय सद्‌गुरु जय जय अखण्ड ज्योति प्रभु राम लाल जय–जय से गुंजायमान हो रहा था। बैण्ड बाजों की आध्यात्मिक धुनों पर लोग झूम–झूम कर नाच रहे थे। सभी के मस्तिष्क पर चन्दन का लेप सुशोभित हो रहा था। रात्रि 1 बजे तक योगी डॉ. दासलाल जी महाराज का जन्मोत्सव उनके भक्तों द्वारा बड़ी ही धूम–धाम से मनाया गया। गुरुदेव के रात्रि तक सुन्दर–सुन्दर, भजन की प्रस्तुति हुई। आचार्य जी ने 12 बजे प्रभुजी की आरती

की। केक का सभी भक्तों को प्रसाद वितरण किया गया। बच्चों को टॉफियाँ बाँटी गई, आतिशबाजी भी हुई। अन्त में आचार्य जी ने कहा ब्रह्म सत्य है। जगत तो मिथ्या है। इसलिये सभी योग मार्ग पर चलें एवं ध्यान अभ्यास को बढ़ाते जायें, इसी में सभी की भलाई है। सभी का कल्याण होगा। आचार्य जी ने समस्त गुरुभक्तों, बच्चों, विद्यार्थियों, किसानों, व्यापारियों इत्यादि को नव वर्ष की शुभकामनायें दीं तथा सभी को अपने–अपने क्षेत्र में प्रगति का आशीर्वाद प्रदान किया। 1 जनवरी को विशाल भण्डारे में समस्त गुरुभक्तों, धर्म प्रेमियों ने श्री महा प्रभु जी का प्रसाद ग्रहण किया। 2 जनवरी को गंगापुर सिटी के योग प्रचार मण्डल ने श्री आचार्य जी को प्रातः 7 बजे भाव भीनी विदाई दी।

शुल्क समाप्ति की सूचना

मार्च 2019 के अंक के साथ ही सिद्धयोग पत्रिका का वार्षिक शुल्क समाप्त हो जाता है। अतः पाठकों से निवेदन है कि अगले वर्ष के लिये वार्षिक शुल्क 190 रुपये शीघ्र सिद्धयोग कार्यालय में जमा कर दें। प्रायः पाठक श्री रामनवमी के उत्सव पर स्वयं आकर जमा कर देते हैं किन्तु जो उत्सव में नहीं पहुँच पा रहे हैं उन्हें पहले ही जमा करा देना चाहिये। द्विवार्षिक शुल्क 370 रुपये तथा वार्षिक शुल्क 190 रुपये निश्चित हो गया है। 10 वर्षीय आजीवन शुल्क यथावत् 1000 रुपये ही है। गुरु भक्तों से निवेदन है कि कम से कम 5 नये ग्राहक बना कर इस ज्ञानयज्ञ में सहयोग करें।

जय सद्गुरु देव जी की।

नोट–ग्राहक PAYTM के माध्यम से भी शुल्क व अपना पूरा पता भेज सकते हैं–9808841705

प्रबन्धक

सिद्धयोग मासिक

आश्रम समाचार

भारतीय राष्ट्र एकता का प्रतीक एवं आस्था का महाकुम्भ 2019

इस वर्ष 15 जनवरी से 4 मार्च 2019 तक तीर्थराज प्रयागराज में महाकुम्भ का आयोजन चल रहा है। माननीय प्रधानमन्त्री एव उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री योगी आदित्यनाथ जी महाराज के महान पुरुषार्थ एवं कर्मठता से यह कुम्भ अवर्णनीय रहा। 45 किमी में फैला हुआ यह कुम्भ महोत्सव विश्व के महोत्सवों में एक है। इतनी संख्या में एक जगह पर श्रद्धालुओं का एकत्रित होना संसार के आश्चर्यों में से एक कहा जा सकता है। जहाँ 6–7 करोड़ श्रद्धालु एक स्थल पर एकत्रित होकर, स्नान व आध्यात्म चर्चा करते हों। यहाँ त्रिवेणी में संगम का अत्यधिक महत्व पुराणों में दर्शाया है। यहाँ स्नान करने से महान् पुण्य होता है। अपने श्री सिद्ध गुफा सवांई धाम एव इससे सम्बन्धित आश्रमों का शिविर इस बार कुम्भ में सेक्टर 15 में शंकराचार्य मार्ग पर लगा हुआ है। ''योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज श्री सिद्ध गुफा सवांई धाम एवं प्रयाग राज'' के नाम से श्रद्धालुओं के संयुक्त तत्वावधान में यह शिविर लगा है।

मौनी अमावस्या 4 फरवरी को थी जिसमें कई करोड़ श्रद्धालुओं ने संगम तट एवं पवित्र गंगा में डुबकी लगाई। अपने शिविर में श्री आध्यात्म कार्यक्रम चलता रहा। प्रातःकाल 5 से 6 ध्यानाभ्यास तथा 6 से 8 बजे तक योगासन, जीवन तत्व साधन एवं षटकर्मों का अभ्यास कराया जाता रहा।

इसके अतिरिक्त श्रीमद् भागवत् महापुराण की पवित्र कथा आचार्य धमेन्द्र के द्वारा सुन्दर ढंग से कही गई। शिविर आश्रम में ही सभी साधकों के भोजन एवं ठहरने की समुचित व्यवस्था समिति के लोगों द्वारा संचालित रही जो प्रशंसनीय थी। प्रतिदिन गीता के दो अध्याय का पाठ तथा इन अध्यायों का सार श्री सिद्ध गुफा सवांई से पधारे आचार्य डॉ. दासलाल जी महाराज के द्वारा समझाया गया। हमारे बाहर के अनेक आश्रमों से आये साधकों ने भी इस पुण्य क्षेत्र में आकर स्नान एवं आध्यात्म ज्ञान यज्ञ का आनन्द लिया।

4 मार्च को शिव रात्रि स्नान के साथ ही इसका समापन हुआ। इस प्रकार से यह कुम्भ अपने में एक अद्‌भुत कुम्भ के रूप में देखा गया जिसकी सभी श्रद्धालुओं ने सराहना की तथा प्रशासन एवं सरकार को धन्यवाद दिया जिसने भक्तों व श्रद्धालुओं के लिये इतनी सुन्दर व्यवस्था की। इसकी जितनी प्रशंसा की जाये उतनी कम है। इस कुम्भ में विदेशों से ही हजारों की संख्या में पर्यटक एवं श्रद्धालु आये जिन्होंने स्नान एवं जन आस्था का दर्शन किया।

॥ श्री रामलाल प्रभवे नमः ॥

योग महामेला

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि **आनन्दकन्द श्री प्रभुजी का प्राकट्‌य दिवस** के उपलक्ष्य में **श्री सिद्धगुफा सवांई धाम** में **योग महामेला दिनांक 11, 12 व 13 अप्रैल 2019** तदनुसार गुरुवार, शुक्रवार व शनिवार को बड़े ही धूम–धाम से मनाना निश्चित हो चुका है। सभी गुरु भक्तों से निवेदन है कि उत्सव में आकर पुण्य लाभ लें। **श्री रामनवमी का भण्डारा 13 अप्रैल** को होगा।

चैत्र नवरात्राराम्भ 6 अप्रैल से है।

जय सद्‌गुरु देव जी की।

निवेदक

साधकगण

श्री सिद्ध गुफा सवांई धाम

एत्मादपुर, आगरा।

"योग सिद्धि द्वारा परकाय प्रवेश"

(श्री विजय कुमार एम. ए.)

भगवान पतञ्जलि जी के अनुसार सकाम कर्म रूपी धर्माधर्म बन्धनों के कारण को शिथिल करने से एवं इन्द्रियों के द्वारा विषयों में चित्त को प्रवाहित करने वाली चित्तवहा नाड़ी के स्वरूप एवं चित्त के परिभ्रमण मार्ग को ज्ञात कर लेने से साधक के चित्त (सूक्ष्म शरीर) का दूसरे जीवित या मृत व्यक्ति के शरीर में प्रवेश हो जाता है।

''बन्धकारणशैथिल्यात्प्रचार संवेदनाच्च चित्तस्य परशरीरावेश:''।

इसी प्रकार आदि शंकराचार्य के मतानुसार **''यथाभिध्यानाद्वा''** अर्थात् ध्यान के परम शक्ति सिद्धि से भी परकाया प्रवेश सिद्धि हो जाता है। ''योग वाशिष्ठ'' के अनुसार रेचक प्राणायाम के अभ्यासरूप युक्ति से मुख द्वारा 12–12 अंगुल परिमित देश में प्राण को चिरकाल तक स्थिर रखने पर योगी अन्य शरीर में प्रवेश करने वाला हो जाता है। अनुभव के आधार पर अन्य कभी साधन भिन्न–भिन्न व्यक्तियों द्वारा परकाय–प्रवेश सिद्धि के लिये बताये गये हैं परन्तु अन्य कष्ट साध्य है। तथा बिना सत्व को जागृत (धारणा, ध्यान, समाधि के द्वारा) किये इस सिद्धि के लालच में पड़ना मृत्यु को निमन्त्रण देना ही होगा। क्योंकि अन्य क्रियाओं में त्राटक की प्रधानता है। जो कि ''हठयोग'' का उत्कृष्ट साधन है। खेचरी मुद्रा द्वारा भी परकाय–प्रवेश हो जाता है। इसमें प्रात: बेला में आकाश तत्व के उदय होने की स्थिति में 12 घण्टे तक आकाश तत्व में संयम करना पड़ता है।

हमारे पुराणों एवं धार्मिक ग्रन्थों में परकाया प्रवेश के बहुतायत से प्रमाण सहित उदाहरण मिलते हैं। भगवान् शंकराचार्य का सुधन्वा या अगरुक के मृत शरीर में प्रवेश करना, चूडाला द्वारा पति के समाधि तोड़ने हेतु उनके शरीर मे प्रवेश करना, राजा पद्म के मृत शरीर में राजा विदुरथ का प्रवेश करना, तथा अन्य कई उदाहरण नाथ सम्प्रदाय के योगियों के जीवन में घटित हुए प्रमाण रूप सामान्य रूप से मिलती हैं। यहाँ सविस्तार कुछ घटनायें भी ऐतिहासिक एवं सत्य हैं उन्हें सर्व साधारण को योग शक्ति की महत्ता जान लेने के लिये लिखना उचित होगा। हमारे शरीर तीन रूप रखते हैं। प्रथम स्थूल जिसका हम प्रत्यक्ष अवलोकन करते हैं। द्वितीय सूक्ष्म शरीर। तृतीय कारण शरीर। परकाया–प्रवेश के

लिये सूक्ष्म शरीर जो सर्व साधारण को दृष्टिगोचर नहीं होता इसका ही एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश कराया जाता है। जीवात्मा इसी सूक्ष्म शरीर से प्रत्यक्ष दीखने वाले स्थूल शरीर को त्यागता है एवं पुनः घट में प्रवेश करके पुनर्जन्म ग्रहण किया है। ऐसा शास्त्रों का मत है।

जगत गुरु आदि शंकराचार्य का परकाय प्रवेश

बौद्ध धर्म के अन्तिम चरण में कुछ भ्रामक प्रथायें एवं विचारगत रूढ़िवादिता फैल चुकी थी। जिसके कुप्रभाव से सनातन वैदिक धर्म क्षीण हो गया था। ऐसे समय में अद्वैतवाद के समर्थक आदि शंकराचार्य ने अपनी अल्प उम्र में ही अद्‌भुत शक्ति एवं विद्वत्ता द्वारा विरोधी मत वाले विद्वानों को शास्त्रार्थ में परास्त करके समस्त भारत भूमि में जगह–जगह अद्वैत सिद्धान्त एवं वैदिक धर्म की विजय पताका गाढ़ते लहराते वाराणसी तक आ पहुँचे थे। अपने सिद्धान्तों के समर्थन में जब काशी में विजय प्राप्त हो गयी तो वे अपने विद्वान शिष्यों की भारी भीड़ के साथ मिथिला की ओर बढ़े। उन दिनों मिथिला में प्रकाण्ड विद्वान श्री मण्डन मिश्र मौजूद थे। वहाँ डटकर भगवान् श्री शंकराचार्य जी से एवं श्री मण्डलमिश्र से धर्म के भिन्न–भिन्न पहलुओं पर शास्त्रार्थ हुआ। मध्यस्तता श्री मण्डनमिश्र की विदुषी धर्म पत्नी भारती कर रही थीं। परन्तु अन्त में श्री मण्डनमिश्र ने आचार्य से शास्त्रार्थ में हार मान ली। इसी समय भारती ने नम्र एवं न्यायोचित्त शब्दों में भगवान् शंकराचार्य से कहा कि आचार्य अभी आप पूर्ण विजेता नहीं हुये हैं। जब तक मुझे भी आप शास्त्रार्थ में पराजित नहीं कर देंगे यह विजय अपूर्ण समझी जायेगी। स्त्री (पत्नी) पति की अर्द्धांगिनी कही जाती है। अतः अब आप मुझसे शास्त्रार्थ करें।

विद्वानों के विशेष समारोह में दूसरे दिन से ही भारती और आचार्य शंकर का शास्त्रार्थ शुरु हो गया। परन्तु कुछ ही दिनों के पश्चात् भारती अपना पलड़ा हलका महसूस करने लगी। उसी समय भारती के मन में एक विचार कौंधा। आचार्य शंकर बाल ब्रह्मचारी तथा सन्यासी हैं अतएव इनको ''कामकला'' का अवश्य ही ज्ञान नहीं होगा। बात भी यथार्थ थी, आठ वर्ष में ही पूर्ण वेदों का ज्ञान प्राप्त कर परम वैराग्य को प्राप्त भगवान **''शंकराचार्य काम शास्त्र''** से बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे। जैसे ही भारती ने **'कामकला'** पर प्रश्न करने प्रारम्भ किये आचार्य शंकर ने मौन धारण कर लिया। सारा विद्वत समाज भारती की चतुराई से स्तब्ध रह गया। परन्तु दृढ़ संकल्प से समाज की कुरीतियों एवं पाखण्डों का विनाश करने वाले आचार्य शंकर ने भारती से इस विषय पर शास्त्रार्थ करने के लिये कुछ समय देने के

लिए प्रार्थना की, जिसको भारती ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

भगवान् अपने कुछ अधिकारी शिष्यों को साथ लेकर एक वनस्थली में पहुँचे जहाँ दिव्य दृष्टि द्वारा एक राजा का प्राणान्त होते देखा। सुन्दर नवयुवक राजा के देहावसान से रानियाँ तथा स्वजन सभी क्रन्दन करते हुये महान दुःख को प्राप्त हो रहे थे। ऐसा जानकर तुरन्त आचार्य शंकर ने अपने शिष्यों को आदेश दिया कि अभी मेरा यह पार्थिव शरीर मेरी इच्छा से निर्जीव होकर मृत शरीर सा हो जायेगा। परन्तु तुम लोग इसकी रक्षा करना। अज्ञानतावश दाह संस्कार मत कर देना। कुछ समय उपरान्त मैं पुनः अपनी जीवात्मा को इसी शरीर में प्रवेश कर लूँगा। ऐसा कहकर आचार्य क्षणमात्र में अपने जीवात्मा को संन्यासी शरीर से निकालकर योग द्वारा उस मृत राजा के शव में प्रवेश करा दिया। देखते-देखते मृत राजा जीवित हो उठे। सम्पूर्ण राजमहल हर्ष से भर गया। रानियों को अपना सुहाग मिल गया।

अब आचार्य शंकर राजा के शरीर में प्रवेश कर राजोचित व्यवहार करने लगे तथा साथ ही ''कामकला'' का ज्ञान उन रानियों से प्राप्त कर रहे थे। परन्तु कहाँ एक राजा और कहाँ पूर्ण ब्रह्म निष्ठ संन्यासी की जीवात्मा जिसके सारे संस्कार नष्ट हो चुके हों। व्यवहार में कुछ न कुछ अन्तर तो आना आवश्यक ही था। परन्तु घट वही होने से किसी को सन्देह नहीं हो पाता था कि इस राजा के शरीर में अब किसी उज्जवल जीवात्मा का वास हो चुका है। पूर्ववत् राजकाज आनन्दपूर्वक चलता रहा। परन्तु एक दिन सबसे छोटी रानी का जो तंत्र विद्या जानने वाली थी, उसे राजा के ऊपर सन्देह हो गया तथा उसने अपनी तंत्र-साधना के बल से राजा के शरीर में आये हुये उज्जवल जीवात्मा को पहचान लिया। इतना ही नहीं उसने आचार्य के संन्यासी के पार्थिव शरीर जो उस समय शिष्यों द्वारा रक्षित था का भी ज्ञान प्राप्त किया तथा उसी समय कुछ कापालिकों एवं सैनिकों को इस आशय से भेजा कि आचार्य के संन्यासी निर्जीव शरीर को जबरदस्ती नष्ट कर दो जिससे आचार्य की आत्मा राजा के शरीर में ही सर्वदा के लिये रह आये। परन्तु अन्तः दृष्टि वाले आचार्य ने जो राजा के शरीर में थे तुरन्त ही रानी के विचारों को जानकर अपनी जीवात्मा को राजा के शरीर से योग द्वारा निकालकर अपने पहले छोड़े हुये शरीर में प्रवेश करा दिया। इधर पुनः राजा जो जीवित थे शव रूप हो गये और उधर संन्यासी शरीर आचार्य शंकर के रूप में जीवित हो उठा।

इस प्रकार भगवान शंकराचार्य ने अपनी जीवात्मा उस मृत राजा के शव में प्रवेश कराकर कुछ काल तक निष्काम भाव से राजोचित व्यवहार करते हुये ''कामकला'' का

ज्ञान अर्जित किया तथा अबकी बार लौट कर जब भारती से शास्त्रार्थ हुआ तो अन्ततोगत्वा आचार्य शंकर विजयी हुये। भारती अपने विद्वान पति श्री मण्डनमिश्र के साथ आचार्य से दीक्षा प्राप्त कर शिष्य बन गयी।

एक वृद्ध योगी का परकाय प्रवेश

एक फौजी ऑफिसर द्वारा परकाया प्रवेश की घटना जो उसकी आँखों देखी हुयी थी। इस प्रकार का वर्णन कुछ दिनों पूर्व हमें किसी पत्रिका या 'कल्याण' के किसी अंक में पढ़ने को मिला था, जिसका वर्णन मैं यहाँ कर रहा हूँ।

घटना आसाम–बर्मा के घने सरहदी जंगली इलाके की है। कोई फौजी बड़ा अफसर जिसको भारतीय योग विद्या के चमत्कारों को देखने की बड़ी जिज्ञासा थी परन्तु कभी ऐसा अवसर प्राप्त नहीं हुआ था, एक दिन भयंकर जंगल में अपने कुछ वरिष्ठ अधिकारियों तथा सैनिकों के साथ सरहदीय क्षेत्र का मुआयना कर रहा था। जिस स्थान पर वे सभी लोग ठहरे हुये थे उसी के पास एक पहाड़ी नदी बह रही थी। उस अधिकारी ने यकायक नदी में सवस्त्र एक शव बहता हुआ देखा। उत्सुकतावश दुर्बीन द्वारा उस बहती हुई शव समान वस्तु का निरीक्षण करने लगा। उसने देखा एक नवयुवक का शव बहता हुआ किनारे से कुछ दूर है तथा एक वृद्ध कंकाल मात्र अथक परिश्रम करते हुये उस शव को किनारे पर लाना चाह रहा है परन्तु बार–बार असफल हो जा रहा है। क्योंकि पहाड़ी नदी होने के कारण जल का प्रवाह अत्यधिक था और साथ ही अति दुर्बल एवं कमजोर वह वृद्ध पुरुष था। अफसर ने इस दृश्य की ओर अन्य साथियों का भी ध्यान मोड़ा जिससे साथ के कई लोग अपने–अपने दुर्बीनों द्वारा जिज्ञासा के साथ उस वृद्ध के शव पर नियन्त्रण प्राप्त करना देखते रहे। अन्त में वृद्ध ने अपने प्रयत्नों द्वारा सफलता प्राप्त कर ली। उसने शव को तट पर लाकर कुछ क्षण विश्राम किया तथा बाद में शव को लेकर निकटवर्ती एक विशाल वृक्ष की ओट में कुछ देर न मालूम क्या करता रहा। उन आफिसरों के आश्चर्य एवं कौतूहल का ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि वृक्ष की ओट से वह मृत युवक जीवित व्यक्ति की तरह चलकर जंगल की ओर जा रहा है। जिज्ञासा अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई। उस फौजी ऑफिसर ने अपने कुछ साथियों को साथ लेकर तुरन्त ही उस नवयुवक का पीछा किया।

निरन्तर कुछ समय तक पीछा करने पर पास जाकर उस ऑफिसर ने उस नवयुवक को रुकने का हुक्म दिया तथा साथ ही पूछा तुम कौन हो? हम सभी ने तुम्हें कुछ समय पहले नदी में शव की तरह बहते हुये देखा है और अब तुम जिन्दा हो। यह सब क्या रहस्य है?

वह वृद्ध जो तुमको निकाल रहा था कहाँ गया? उस नवयुवक ने उन ऑफिसरों से कहा "मैं ही वह बूढ़ा आदमी हूँ।" यह उत्तर सुनकर सभी आश्चर्य चकित हो गये। इसके उपरान्त बहुत विनम्रता से आग्रह करके पूछने पर उस नवयुवक ने बताया "कि मैं योगी हूँ। जिस समय मेरा शरीर समय के प्रवाह में वृद्ध हो जाता है और मैं नैतिक कर्मों के करने में उस शरीर से असमर्थ हो जाता हूँ, तब मैं किसी मरे हुये स्वस्थ नवयुवक शव को खोज करके अपनी जीवात्मा उस शरीर में प्रवेश करा देता हूँ। अभी जो आप लोग वृद्ध पुरुष की बात पूछ रहे थे वह मैं ही हूँ। शरीर उस पेड़ के पीछे पड़ा है। वास्तव में जब उस पेड़ के पास जाकर ऑफिसरों ने देखा तो एक वृद्ध की लाश वहाँ पड़ी थी। ये सारी की सारी बातें उन अधिकारियों के लिये आश्चर्यजनक एवं चमत्कारिक थी यही जगत आत्मा अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्री कृष्ण चन्द्र ने गीता में कहा है "कि यह पार्थिव शरीर आत्मा नहीं है। हे अर्जुन आत्मा तो शरीर को उसी प्रकार से समयान्तर में छोड़ देता है जैसे हम तुम अपने पुराने जीर्ण-शीर्ण कपड़ों को उतारकर नया धारण करते है। जीवात्मा भी उसी प्रकार नये शरीर को धारण कर लेती है" हमारे प्राचीन ऋषिमुनि अपूर्व योग-विद्या का अनुसरण कर हजारों बार परकाया प्रवेश करते रहे है।

गोविन्दं भज मूढ़मते!

वयसि गते कः कामविकारः

शुष्के नीरे कः कासारः।

क्षीणे वित्ते कः परिवारः

ज्ञाते तत्त्वे कः संसारः।।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं

गोविन्दं भज मूढ़मते!

अवस्था बीत जाने पर अर्थात् वृद्धावस्था आने पर काम विकार ही क्या? अर्थात् व्यर्थ ही है। पानी सूख जाने पर तालाब, पोखरा आदि का क्या महत्त्व? कुछ भी नहीं। जब पास में धन नहीं है तो परिवार कौन? कोई नहीं। पास में धन रहे तो सभी घेरे रहते हैं। इसी तरह तत्वज्ञान हो जाने पर संसार क्या? कुछ भी नहीं। अज्ञान ही संसार की जड़ है। अतः हे मन्दमते! ज्ञान प्राप्त करने के लिए तू गोविन्द का भजन कर।।

—आचार्य शंकर

शिष्यों के हित में सद्गुरुदेव की दिव्य शक्तियाँ

(श्री आचार्य यशोवर्धन)

सिद्ध पुरुष अपने अनन्य भक्तों और शिष्यों के हित में किस प्रकार अपनी दिव्य शक्तियों का प्राकाट्य करके उनका परित्राण करते हैं नीचे की कुछ घटनायें इसी का संकेत मात्र हैं–

स्वामी रामदास शिवाजी के समकालीन एक सिद्ध सद्गुरु थे। गुरु अपने शिष्यों को एक समान प्रेम करता है किन्तु उनमें से कोई एक उसे विशेष प्रिय हो सकता है। जैसे मनुष्य अपने सभी अंगों को प्यार करता है किन्तु अंगुलियों की अपेक्षा, उसकी आँखें उसे अधिक प्यारी होती हैं। इसी प्रकार स्वामी रामदास को अपने अनेक शिष्यों में सभी प्रिय थे किन्तु कल्याण सबसे अधिक प्रिय था। दूसरे शिष्य यह नहीं समझ पाते थे कि कल्याण औरों की अपेक्षा गुरु को अधिक प्यारा क्यों है?

एक बार स्वामी रामदास ने अपने शिष्यों की भक्ति की परीक्षा ली। उन्होंने अपने घुटनों के जोड़ पर एक आम रखकर उस पर चारों ओर से एक सफेद पट्टी लपेट दी जिससे वह एक सूजे हुए फोड़े के समान दीखने लगा। स्वामी रामदास ने सभी शिष्यों को बुलाया और कहा–देखो मेरे घुटने के जोड़ में भयंकर दुसाध्य व्रण उठ आया है। यह इतनी पीड़ा दे रहा है कि मेरा जीवन ही समाप्त हुआ सा जान पड़ता है। बचना मुश्किल ही मालूम देता है अलबत्ता एक विशेषज्ञ यह बतला गये हैं कि यदि कोई मुंह से चूसकर इसका मवाद हटा देगा तो निश्चय ही जीवन रक्षा हो सकेगी लेकिन इसके साथ यह भी निश्चय है कि जो इस जहरीले व्रण से मुंह लगायेगा उसकी मृत्यु तत्काल हो जायेगी। स्वामी रामदास ने सभी शिष्यों की ओर देखा और कहा–अपनी जान के लिए तुम में से किसी की जान मैं क्यों लूँ? अच्छा यही है कि यह विषैला व्रण मेरे ही प्राण ले ले। सभी शिष्य रामदास के इस कथन को सुनकर चुपचाप बैठे रहे किन्तु कल्याण का मन व्यग्र हो उठा यह बीच बीच में से झपटकर उठा और

घुटने के व्रण पर जाकर उसने अपना मुँह लगा दिया। कल्याण के आश्चर्य की सीमा न रही जब उसने अनुभव किया कि वृण के मवाद की जगह वह मीठे अमरस का अनूठा आनन्द ले रहा है। स्वामी रामदास ने उसकी पीठ थप–थपाई और उसके निष्कपट प्रेम व श्रद्धा की सराहना करते हुए दूसरे शिष्यों को यह अनुभव करा दिया कि कल्याण क्यों उनको अधिक प्रिय है।

कल्याण की जैसी असंदिग्ध श्रद्धा अच्युत प्रेम तथा अविभक्त निष्ठा सद्गुरु की कृपा से ही प्राप्त होती है।

(2)

गौसाली शाह के गुरु गंगा नदी के किनारे एक कुटी में रहते थे। उन्होंने अपने इस शिष्य को नदी की बीच धार से एक घड़ा भर पानी पीने के लिए लाने का हुक्म एक दिन दिया। आधी रात का वक्त था और वर्षा के कारण गंगा नदी भरपूर उभार पर थी। गौसाली पहले तो हिचकिचाया किन्तु बाद में साहस बटोर कर तथा गुरु की सर्वज्ञता पर विश्वास करके असम्भव को सम्भव करने के लिए उद्यत हो गया। भयानक और अगाध जल प्रवाह के भीतर वह उतर भी नहीं पाया था कि नदी में उसे आश्चर्यजनक परिवर्तन दिखाई पड़े। उसने देखा भयंकर अगाध बाढ़ वाली नदी केवल एक पतली धारा के रूप में बह रही है। उसका घड़ा नदी के तल को छू जाता था। उसने सोचा यह धार नहीं हो सकती। वह साफ धार की तलाश में दूसरे किनारे तक जा पहुँचा। इसी बीच में उसने अपने गुरु को अपने पास खड़ा पाया। गुरु ने पूछा तुम्हें इतना विलम्ब क्यों हुआ? शिष्य ने कहा मुझे सिवाय इस पतली धार के और कोई धार ही नहीं पा रही है जहाँ से घड़ा भर सकूँ। तब गुरु ने कहा अच्छा इस पतली धार से ही घड़ा हाथों से पानी उलीच–उलीच कर भरलो। शिष्य आदेश के अनुसार घड़ा भरने लगा उसने यह भी देखा कि उसके गुरुदेव भी हाथों से पानी उलीच–उलीच कर घड़ा भरने में उसकी मदद कर रहे हैं। कुछ बहाना बताकर गुरु शिष्य को घड़ा भरकर तुरन्त आने के लिए कहकर चलते बने। शिष्य गौसाली शाह जब कुटी में लौटा तो अपने दूसरे शिष्य साथियों से यह सुनकर उसके आश्चर्य की सीमा न रही कि उसके गुरु उसकी अनुपस्थिति में कुटिया को छोड़कर एक क्षण के लिए भी बाहर नहीं गये। वे लगातार उसके बारे में वहीं बैठे–बैठे शिष्यों से बातें करते रहे थे।

दिव्य शक्ति के प्रयोग का यह प्रकार था। गौसाली शाह के गुरु का जिसके माध्यम से उन्होंने अपने शिष्य के अहंकार को परोक्ष रूप से मिटाकर उसे साधना के पथ में आगे बढ़ने

के लिए प्रेरित किया। पर सद्गुरु ऐसी दिव्य शक्तियों का प्रयोग तब तक नहीं करते जब तक ऐसा करना आध्यात्मिक कारणों से जरूरी न हो।

(3)

शकुनि के कपटपूर्ण पाशों के खेल में दुर्योधन पाण्डवों का सर्वस्व हरण कर चुका है। धर्मराज युधिष्ठिर पर अधर्म का अंकुश जम कर बैठ गया था वे अपनी पति परायणा पत्नी द्रौपदी को दांव पर लगाया। उसे भी अपने विरोध पक्ष में हार चुके हैं। नियमानुसार द्रौपदी को खुले सभा भवन में बुलाया गया। उसने कहा मैं मासिक धर्मा होने के कारण सभा–भवन में जाने की स्थिति में नहीं हूँ–क्षमा कीजिए मैं जा नहीं सकती। कौरव दूत ने कहा तुम कौन होती ना न जाने वाली। अब तुम पाण्डवों की नहीं कौरवों की सम्पदा हो। क्योंकि युधिष्ठर तुम्हें पाशों के खेल में दांव पर लगाकर हार चुके हैं। द्रौपदी सुनकर अवाक रह गई। सन्देश–वाहक इच्छा न होने पर भी उसे बलपूर्वक सभाभवन में ले आया।

सार्वजनिक खुली असेम्बली में जहाँ पाण्डव भी अपनी पराजय की वेदना लिए बैठे थे–द्रौपदी को अपमानित किया गया। उतार दो यह सुन्दर राजसी साड़ी अब तुम दासी हो अतः दासों की पोशाक ही तुम्हें पहननी होगी। द्रौपदी ने अनेक तर्क दिये–अनुनय विनय की किन्तु किसी पर ध्यान नहीं दिया गया। साड़ी उसके शरीर की बलपूर्वक खींची जाने लगी। दुष्ट दुःशासन इस अधम कार्य के लिए आगे आया–नारी की लज्जा निवारण हेतु धारण की साड़ी वह बरबस खींचने लगा–सभी प्रकार के व्यक्ति सभा में थे किन्तु किसी को भी इस अत्याचार का विरोध करने का साहस न हुआ। देवी द्रौपदी असहाय थी उसे इस भीषण संकट में भगवान् कृष्ण का स्मरण आया वह आर्तस्वर में उन्हें पुकारने लगी। उसके हृदय की वेदना ने द्वारिका में बैठे भगवान कृष्ण के चित्त को प्रभावित किया। योगयोगेश्वर ने अपने को स्मरण करने वाली अबला की सहायता अपनी योग शक्ति द्वारा करने में एक क्षण का विलम्ब नहीं किया। दुःशासन द्रौपदी के शरीर की साड़ी को बलपूर्वक उतार रहा था–भगवान् कृष्ण का योगेश्वर्य उसकी सहायता कर रहा था. दुःशासन के हाथ साड़ी खींचते–खींचते थक गये लेकिन साड़ी का अन्त नहीं आया–वस्त्र की यह अनन्तता योग–योगेश्वर की योग माया के अतिरिक्त और कुछ नहीं थी।

धर्म के रक्षणार्थ और पाण्डवों के हित में भगवान् कृष्ण ने अनेक अवसरों पर अपनी यौगिक शक्तियों का प्रयोग किया। इतना ही नहीं अपने ब्रजवास के दिनों में जब उनकी अनन्य आराधिका गोपियाँ नृत्य लीला के समय कृष्ण का हाथ पकड़कर नृत्य करने की

अलग–अलग इच्छा करती थीं तब योगेश्वर कृष्ण एक के अनेक होकर प्रत्येक गोपी के साथ एक समय में सब की अंगुली पकड़कर नृत्य लीला करते हुए दृष्टिगोचर होते थे। ऐसे ही एक दिन उन्होंने अपने खिरक की सभी गायों को एक ही समय में एक साथ दुहकर माँ यशोदा को आश्चर्यचकित कर दिया था–यह सब उनका योगिक चमत्कार ही था।

सिद्धयोग मासिक (पत्रिका) का विवरण

फार्म नं. 4

1. प्रकाशन का स्थान : श्री सिद्धगुफा, सवाँई (एत्मादपुर) आगरा (उ. प्र.)
2. प्रकाशन का अवधिक्रम : मासिक
3. मुद्रक का नाम : दासलाल शर्मा
   राष्ट्रीयता भारतीय
   पता श्री सिद्धगुफा, सवाँई, आगरा (उ. प्र.)
4. प्रकाशक का नाम : दासलाल शर्मा,
   राष्ट्रीयता भारतीय
   पता श्री सिद्धगुफा, सवाँई, आगरा (उ. प्र.)
5. सम्पादक का नाम : दासलाल शर्मा
6. स्वत्वाधिकारी : दासलाल शर्मा

मैं दासलाल शर्मा एतद् द्वारा यह घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है।

—दासलाल शर्मा

28 फरवरी 2019

कृते, सिद्धगुफा प्रकाशन,
सवाँई (एत्मादपुर) आगरा

जैसी जाकी भावना वैसे वाके राम

(श्री ब्रह्मचारी ब्रजमोहन वाशिष्ठ)

प्रभु के अनन्त रूप है अनन्त नाम। वास्तव में प्रभु के न कोई रूप है न नाम किन्तु जो जिस नाम रूप में उन्हें स्मरण करता है प्रभु उसको उसी नाम रूप में दिखायी पड़ते हैं।

आनन्द–कन्द श्री कृष्णचन्द्र महाराज ने कहा भी है कि जो भक्त मुझे जिस–जिस भाव से स्मरण करता है मैं उसी भाव से प्रकट होता हूँ।

भावना का दूसरा नाम श्रद्धा भी है, जिसके आधार पर हम लोग लोक के सभी काम किया करते हैं। जितनी ऊँची श्रद्धा हमारी होगी उतने ही शीघ्र हम अपने लक्ष्य को पा लेने में समर्थ हो सकेंगे और उसी प्रकार का फल हमारे सामने आयेगा। श्रद्धा का फल बतलाते हुए आनन्द–कन्द भगवान योग योगेश्वर श्रीकृष्ण चन्द्र जी महाराज ने कहा है कि–

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं,
तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्ति–
मचिरेणाधिगच्छति।।

अर्थात् जितेन्द्रिय तत्पर हुआ श्रद्धावान पुरुष ज्ञान को प्राप्त होता है और ज्ञान को प्राप्त कर तत्क्षण भगवत प्राप्ति रूप परम शान्ति को पा जाता है।

यहाँ श्रद्धावान् शब्द के साथ जितेन्द्रिय और तत्पर शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। जिससे पता चलता है कि श्रद्धावान पुरुष तत्पर अर्थात् लग्नशील तो होता ही है उसका जितेन्द्रिय होना भी आवश्यक है। इन सब गुणों के प्रकट होने के साथ–साथ यह भी कहा है कि श्रद्धावान को ही ज्ञान (अनुभूतिज्ञान या यों कहिए योग युक्त ज्ञान, प्राप्त होता है, जो हमारा परम लक्ष्य है। इसका सार यह हुआ कि श्रद्धा ही सब गुणों और लक्ष्य प्राप्ति का सर्वप्रथम द्वार है। श्रद्धाहीन का अपने लक्ष्य तक पहुँचना कठिन ही नहीं असंभव भी है।

श्रद्धाहीन पुरुष लोक परलोक का कोई भी लक्ष्य पा नहीं सकता। इस प्रकार वह नष्ट प्रायः हो जाता है। श्रद्धाहीनता का फल गीता के नौवें अध्याय के तीसरे श्लोक में कहा गया है कि–

अश्रद्दधाना: पुरुषा
धर्मस्यास्य परंतप।
अप्राप्य मां निर्वतन्ते
मृत्यु संसार वर्त्मनि।।

अर्थात्–हे परंतप! इस तत्वज्ञान रूप धर्म मे श्रद्धा रहित पुरुष मेरे को न प्राप्त होकर मृत्युरूप संसार चक्र में भ्रमण करते हैं। इसलिए हमारे लिए श्रद्धावान होना अनिवार्य है जिससे हम अपने लक्ष्य को पा सकें।

श्रद्धा के भी अनेकों रूप हैं। जिस रूप की जिसकी भावना होगी उसी के अनुरूप वह अपने लक्ष्य को पाया करता है। उसी के अनुरूप वह परमात्मा के दर्शन पाता है एक ही तत्व को हम भिन्न–भिन्न रूपों में श्रद्धा की भिन्नता के ही कारण देखते हैं। भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज को लीजिए उनको माता पिता ने पुत्र रूप में, गुरुदेव वशिष्ठ ने शिष्य रूप में, रावण ने शत्रु रूप में, भरत महावीर हनुमान विभीषण और गीधराज जटाऊ ने पक्षी होते हुए भी ईश्वर रूप में देखा। इसी प्रकार आनन्दकन्द भगवान योग योगेश्वर श्री कृष्णचन्द्र जी महाराज को भी माता पिता ने पुत्र रूप में, ग्वालवालों ने सखा रूप में, सुदामाजी ने भिन्न रूप में और कंस ने काल रूप में देखा। यह सब उनकी श्रद्धा भावना का ही आधार था।

आज भी हम परम तत्व को अपने–अपने दृष्टिकोण से देखते हैं। हमारी आँखों पर जिस रंग का चश्मा लगा है हम संसार को उसी रंग में देख सकते हैं। इस में नजर आने वाली वस्तु का दोष थोड़े ही है। वस्तुतः देखा जाये दोष हमारी आँखों पर चढ़े चश्मे का है जिसने हमें अपने रंग के अनुरूप ही दिखाया।

यह सब आप जानते ही हैं कि उन्नति पाने या आगे बढ़ने के लिए हमें परीक्षायें देनी हैं बिना परीक्षा कोई भी आगे नहीं बढ़ सकता। जब संसार की छोटी–छोटी वस्तु या पद पाने के लिए हमारी योग्यता देखी जाती है, तो फिर उस परम लक्ष्य तत्वज्ञान को पाने के लिए क्यों न योग्यता देखी जायेगी। लौकिक लक्ष्य और पारलौकिक लक्ष्य पाने में केवल मात्र अन्तर यह है कि लौकिक लक्ष्य के लिए हमें परीक्षा के समय और रूपक की जानकारी

पहले हो जाती है किन्तु पारलौकिक परीक्षा के समय और रूपक का हमें ज्ञान नहीं हो पाता। इसमें परीक्षक परीक्षा का क्या रूप बनाये यह उनके अपने मन की बात है। यह ऊँचा लक्ष्य है अतः इसकी विचित्र और ऊँचे ढंग से ही तत्वज्ञानी महापुरुष परीक्षा लेते हैं जिनमें कोई सहस्त्रों में एक ही उस विद्या को पाने का अधिकारी हो पाता है। मुझे इसी विषय की कई घटनाओं का स्मरण हो रहा है। जैसे कठोपनिषद में नचिकेता की श्रद्धा अत्यन्त ऊँची थी वह नचिकेता को नीचे नहीं गिरा सकी। फलस्वरूप नचिकेता अपने लक्ष्य तत्व ज्ञान को पा सका, मां जगदम्बे पार्वती का प्रसंग रामायण में आता है कि मां की परीक्षा लेने सप्तऋषि आये और उनको श्रद्धा से हिलाना चाहा किन्तु श्रद्धा सीमान्त थी। पार्वती जी श्रद्धा से गिरी नहीं अन्त में स्वयं भगवान सदाशिव ने भी परीक्षा ली और माँ उत्तीर्ण हुई प्रभु को प्रकट होना पड़ा। इसी प्रकार की एक घटना नयी है किन्तु यह भी सत्य ही इस घटना को मैंने अपने परमपूज्य प्रात:स्मरणीय गुरुदेव जी महाराज के श्री मुखारविन्द से स्वयं सुना था। इस घटना का सम्बन्ध हमारे महाप्रभु योगयोगेश्वर प्रभु श्री रामलाल जी महाराज से है इसलिये इस घटना को मैं कुछ खोलकर ही लिख देना चाहता हूँ।

मथुरा में एक महात्मा सत्संग लगाया करते थे। सैंकड़ों व्यक्तियों की भीड़ बनी रहती थी। इस प्रकार नित्य सत्संग चलता था। ये महात्मा किसी दिन श्री प्रभुजी से मिले। श्री प्रभु जी ने महात्मा जी से कहा तुम किस चक्कर में पड़ गये, इन सत्संगियों में कौन तुम्हारा है। महात्मा जी ने उत्तर दिया ये सब बड़े श्रद्धालु भक्त हैं। श्री प्रभुजी के काफी समझाने पर भी महात्मा न माने। कई दिन बाद श्री प्रभुजी ने एक वेश्या से भरे समाज में कहलाया कि महाराज आप की रात्रि में मैंने बहुत प्रतीक्षा की। आप क्यों नहीं आये क्या आप को कोई असुविधा रही? यदि ऐसा है तो आज ध्यान रखा जायेगा आप अवश्य-अवश्य आना।

भरे समाज में जब यह बात कही गई तो भक्तों के मन खराब होने लगे। जिनकी श्रद्धा केवल देखा देखी की होती है उन्हीं के मन शीघ्र खराब हुआ करते हैं, ऐसे व्यक्ति अपने लक्ष्य को कभी भी पा नहीं सकते। समाज में प्रायः ऐसे व्यक्ति ही अधिक हुआ करते हैं। महात्मा जी के सत्संगियों में भी अधिकतर ऐसे ही थे। फलस्वरूप धीरे-धीरे सभी सत्संगियों का आना बन्द हो गया। केवल दो श्रद्धालु भक्त ही महात्मा जी के पास आते रहे। महात्मा श्री प्रभु जी से फिर किसी दिन मिले। तो प्रभू जी ने कहा कहिए महात्मा जी कौन तुम्हारा है, इस पर महात्मा जी ने कहा यह दो तो हमारे हैं ही। श्री प्रभु जी ने कहा इनकी भी परीक्षा करे लो। अब महात्मा जी के मन में भी समा गयी कि परीक्षा करनी ही चाहिए। इस विचार

से महात्मा जी ने एक रात में अपने इन दोनों श्रद्धालु शिष्यों को बुलाकर कहा—देखो अमुक मकान में एक वैश्या रहती है उसको बुला लाओ। इस पर उन दोनों शिष्यों में से एक का मन अब खराब हो चुका था वह भी श्री गुरुदेव के प्रति पाप बुद्धि बना कर निकल गया। अब केवल एक ही शिष्य शेष रहा, जो परम निष्ठावान, सीमान्त श्रद्धालु और गुरुदेव के प्रति ईश्वर बुद्धि रखने वाला था। वह बिना किसी संशय के वेश्या के मकान पर पहुँचा और वेश्या से बोला, माता जी आप को प्रभु ने याद किया है। वेश्या उसके संग हो ली और उसके गुरुदेव महात्मा जी के पास पहुँच गयी। महात्मा जी और वेश्या एक कमरे में रहे शिष्य अब बाहर था किन्तु इस समय भी उस सच्चे शिष्य का मन पवित्र ही रहा। लेशमात्र भी कोई संशय इसके मन में पैदा न हो सका। श्री प्रभुजी को वह महात्मा फिर मिला। सब वर्णन श्री प्रभुजी को सुनाया। श्रीप्रभु जी ने आज्ञा दी बस यही एक तुम्हारा है जो देना चाहो उसे दे डालो वह पूर्ण अधिकारी है। महात्मा जी ने अपने उस योग्य शिष्य पर गहरा शक्तिपात किया और उसको योगी बना छोड़ा। इस प्रकार हम जान सकते हैं कि हमारी श्रद्धा का दायरा जितना होगा हम उतनी ही ऊँची वस्तु पा सकते हैं। या यों कहिये कि जिस प्रकार की हमारी भावना होगी वैसे ही हमारे राम होंगे।

जहाँ किसी प्रकार का भी संसार नहीं है, ऐसे प्रदेश में एक क्षण भी यदि तू अपने को रख सके तो तू भगवान का शब्द सुन सकता है। यदि थोड़ी देर भी तू अपने विचार और इच्छा को बन्द कर सके तो भगवान की आश्चर्यजनक वाणी तू सुन सकता है।

—सन्त जैकब

अपने लिए नहीं, भगवान के लिए !

यहाँ सृजन करने के लिए यदि कुछ है तो वह विज्ञान का ही सृजन है। अर्थात् इस पृथिवी पर, केवल मन-बुद्धि और प्राण में ही नहीं, प्रत्युत शरीर में और इस जड़ प्रकृति में भी भागवत्सत्ता का अवतरण कराना है। हमारा उद्देश्य अहंभाव के फैलाव को रोकने वाले प्रतिबन्धों को हटाना अथवा मानस मन की कल्पनाओं या अहंकारगत प्राणवासनाओं को स्वार्थपूर्ति के लिए खुला मैदान छोड़ देना और वैयक्तिक आश्रय प्रदान करना नहीं है। यहाँ कोई भी इसलिए नहीं है कि 'जो मन भावे करे' या किसी ऐसे संसार को रचे जिसमें हम लोग अपनी मनमानी कर सकें; यहाँ हमें तो वही करना है जो भगवान् चाहते हैं और ऐसा ही संसार रचना है जिसमें भगवदिच्छा अन्तर्निहित सत्य को प्रकट करे-वह भगवदिच्छा किसी मानव-अज्ञान से विकृत न हो। विज्ञान के इस योग में साधक को जो काम करना होता है वह कोई उसका अपना काम नहीं है जिस पर वह अपनी शर्तें भी लाद सके, प्रत्युत वह कर्म भगवान् का है और उसे वह कर्म भगवन्निर्दिष्ट नियमों के अनुसार ही करना होगा। हमारा योग हमारे लिए नहीं है, बल्कि भगवान के लिए है। हम जो कुछ व्यक्त करना चाहते हैं वह हमारा वैयक्तिक व्यक्तीकरण नहीं है - सर्वतन्त्रस्वतन्त्र, सर्वसम्बन्धविनिर्मुक्त वैयक्तिक अहंकार का भी व्यक्तिकरण नहीं है; वह स्वयं भगवान का व्यक्त होना है। हमारी मुक्ति, हमारी पूर्णकामता और हमारी परिपूर्णता तो भगवान के व्यक्त होने का ही एक परिणाम और अंगमात्र है और सो भी किसी अहंभाव से नहीं, न किसी अहंता-ममता से निकले स्वार्थ के लिए। वह मुक्ति, पूर्णकामता, परिपूर्णता भी हमारे अपने लिये नहीं, भगवान के लिए है।

– महर्षि अरविन्द

श्री सिद्धगुफा योगाश्र
मैनाई (एत्मादपुर), आगरा

श्री/सुश्री ____________

____

____

□□□□□□

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद्वृणीते।।
(कठोपनिषद् 1/2/2)

श्रेय और प्रेय—ये दोनों ही मनुष्य के सामने आते हैं। बुद्धिमान मनुष्य उन दोनों के स्वरूप पर भलीभांति विचार करके उनको पृथक-पृथक समझ लेता है और वह श्रेष्ठ बुद्धि मनुष्य परमकल्याण के साधन को ही भोग साधन की अपेक्षा श्रेष्ठ समझकर ग्रहण करता है (परन्तु) मन्दबुद्धि वाला मनुष्य लौकिक योग क्षेम की इच्छा से भोगों के साधन रूप प्रेय को अपनाता है।